अभिनव कृषि

त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष-2 अंक-4

दिसम्बर-2020

विशेषांक

● समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन ● समन्वित कृषि प्रणाली ● जैविक खेती ● मृदा एवं जल प्रबन्धन ● मशरूम उत्पादन ● पशुपालन

प्रसार शिक्षा निदेशालय

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001

FORTUNE 500

SELECTED BUSINESS SuperBrand INDIA Industry Validated 2016

1967
से भारतीय किसान के सच्चे साथी

मिट्टी की जान, किसान की शान.

IFFCO

पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

नए उत्पाद
पानी में घुलनशील व विशेष उर्वरक

उत्तम खाद, उचित दाम

FOLLOW US:

IFFCO पूर्णतः सहकारी स्वामित्व

INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED
IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop

इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड
जयपुर तृतीय तल, नेहरू सहकार भवन, जयपुर, राजस्थान, राजस्थान 302001
दूरभाष : 0141-2740660, 2740307, 2740307

चूहा से सम्बंधित

दिमक उदई के लिए

नीम का तेल

मेटाराईजोबियम एजेक्टोबक्टर

बेवीरिया बेसाइना

सुडोमोनास फ्लोरिसेन्स

ट्राइकोडर्मा विरेडी एण्ड हरजेनियम

फसलों में विभिन्न कीटों के लिए उपलब्ध ल्युर (कैप्सुल)

सभी तरह की फसलों में विभिन्न कीटों के लिए उपलब्ध ट्रैप

अन्य उत्पाद

नीम की खली, नाइट्रोजन, फास्फेट, पोटास, माइकोराईजा,
ह्यूमिक एसिड, पोषक तत्व, कार्बनिक खाद व जैविक उत्प्रेरक आदि

PCI श्री जी सर्विसेज, कोटा

रामचरण चौधरी 9929494139, 9694033304

कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र

(Agriculture Technology Management and Quality Improvement Centre -ATMQIC)

प्रसार शिक्षा निदेशालय

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

स्थापना के उद्देश्य

- नवोन्मेषी कृषि प्रौद्योगिकी का प्रभावी हस्तानान्तरण
- किसान कॉल सेन्टर की स्थापना
- कृषि तकनीकी संग्रहालय की स्थापना
- कृषि संसाधन केन्द्रों की स्थापना
- कृषि आदान व उत्पाद बिक्री केन्द्र की स्थापना
- कृषक उपयोगी साहित्य प्रकाशन
- विश्वविद्यालय द्धारा विकसित विभिन्न तकनीकियों का संकलन एवं प्रदर्शन

स्वामी प्रकाशक : डॉ. एस.के. जैन, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Website : https://aukota.org
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com
दूरभाष : 0744- 2326727

पुस्त प्रेष्य _____

अभिनव कृषि त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–2 अंक–4 दिसम्बर–2020 पृष्ठ संख्या : 45

संरक्षक

प्रोफेसर डी.सी. जोशी
कुलपति, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक मण्डल

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रधान संपादक एवं प्रकाशक

डॉ. के.सी.मीना
सहा. आचार्य (प्रसार शिक्षा)
संपादक एवं समन्वयक

डॉ.राकेश कुमार बैरवा
सहा. आचार्य (शस्य विज्ञान)
संपादक

डॉ. डी.के. सिंह
आचार्य (उद्यान विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. महेन्द्र सिंह
आचार्य (पशुपालन)
सह–संपादक

डॉ. सेवाराम रूण्डला
विषय विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
सह–संपादक

श्रीमती गुंजन सनाढ्य
विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
सह–संपादक

सुश्री सरिता
तकनीकी सहायक
सह–संपादक

मनोनीत सलाहकार मण्डल

डॉ.प्रताप सिंह
निदेशक, अनुसंधान

डॉ. आई.बी. मौर्य
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

डॉ. एम.सी. जैन
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

डॉ. मुकेश चन्द गोयल
निदेशक, पी.एम.एण्ड.ई.

सदस्यता शुल्क

- ☞ त्रैमासिक (प्रति अंक) 30 रू.
- ☞ वार्षिक (चार अंक) 100 रू
- ☞ आजीवन (15 वर्ष)1000 रू.

विज्ञापन दरें

(i)	अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन)	रू. 10,000/-
(ii)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन)	रू. 6,000/-
(iii)	अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 5,000/-
(iv)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 3,000/-
(v)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 4,000/-
(vi)	अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 2,000/-

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक : DEE, Agriculture University, Kota
बैंक : ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या : 687801700345
IFSC : ICIC0006878

लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

मुद्रक : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट–"अभिनव कृषि" में प्रकाशित आलेख में दी गई जानकारी स्वयं लेखकों की है। किसी भी प्रकार के विवाद के लिए प्रकाशक एवं सम्पादक मण्डल जिम्मेदार नहीं होगा। तथा इसमें प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है।

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक (प्रसार शिक्षा)

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

प्रधान संपादक की कलम से.....

सभी पाठकों को नववर्ष 2021 की हार्दिक शुभकामनाऐं! कोविड़–19 के कारण महामारी से उपजे विश्व–व्यापी संकट से उभरते हुऐ अब संगठित क्षैत्र की इकाईयों में उत्पादन फिर से होने लगा है, हांलाकि इस विकट परिस्थितियों में भी कृषि एक मात्र ऐसा क्षेत्र रहा है जो बहुत कम प्रभावित रहा है, जिससे प्रभावित होते हुए हजारों युवा एवं उधमी भी कृषि एवं पशुपालन से जुडे व्यवसायों में अपनी आय अर्जन का माध्यम तलाशनें लगें है, साथ ही भारत सरकार द्वारा देश के किसानों की आय दोगुनी करने का प्रयास किया जा रहा है जिसमे देश के कृषि वैज्ञानिकों, कृषि उधमियों एवं किसानों सहित कृषि नीतियों की महत्वपूर्ण भूमिका रहेगी। कृषि में रसायनों के अत्यधिक प्रयोगों से बने हालात को ध्यान में रखते हुऐ कृषि की नवीनतम तकनीकी जैसे सतत् उत्पादन हेतु परम्परागत खेती, देशी खादों का वैज्ञानिक प्रयोग, मृदा स्वास्थ्य, जल एवं मृदा संरक्षण तकनीक, कम लागत में अधिक आय वाली फसल, मशरूम उत्पादन, पशुपालन एवं मुर्गीपालन के साथ–साथ समन्वित कृषि प्रणाली एवं सूचना प्रौद्योगिकीयाँ का वर्तमान कृषि में समावेश बहुत जरूरी हो गया है।

प्रस्तुत अंक में विभिन्न वैज्ञानिकों एवं विशेषज्ञों द्वारा लिखित आलेखों को सम्मिलित किया गया है, जिनके माध्यम से समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन, कीट–व्याधि प्रबंधन, पाले से बचाव के उपाय, मशरूम उत्पादन, मृदा स्वास्थ, जल एवं मृदा संरक्षण, कृषि मे मोबाइल तकनीकी का उपयोग, उन्नत पशुपालन एवं मुर्गीपालन, पशुओं के हरे चारे वाली फसलों की उन्नत प्रौद्योगिकी की जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

मैं पत्रिका के सभी लेखकों, सम्पादक मण्डल एवं सलाहकार मण्डल के सदस्यों को इस अंक के प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई तथा सभी किसान भाईयों को इस रबी मौसम में अच्छी फसल प्राप्त करने हेतु शुभकामनाऐं देता हूँ।

(एस.के. जैन)

अभिनव कृषि त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–2 अंक–4 दिसम्बर–2020

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	बागवानी फसलों में समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन राहुल चोपड़ा एवं नाना लाल माली	1-3
2.	धनिये की फसल को कीट–रोगों से बचायें आर. एन. शर्मा, उदयभान सिंह एवं जे.के. गुप्ता	4-5
3.	सतत् उत्पादन एवं सुरक्षित पर्यावरण हेतु जैविक खाद प्रबन्धन सुभाष असवाल, के.सी. मीणा, सुनिल कुमार एवं पप्पू खटीक	6-10
4.	चने में समन्वित कीट प्रबन्धन सुरेश कुमार जाट एवं लाधू राम	11-13
5.	फसल उत्पादन के लिये जल संग्रहण/प्रबन्धन की प्रभावी रणनीतियाँ सोमदत्त, पी एस शेखावत, दीपेन्द्र शेखावत एवं सरिता	14-16
6.	सर्दी के मौसम में फसलों कों पाले से बचाव के उपाय हरफूल मीणा, भैरू लाल कुम्हार एवं राकेश कुमार बैरवा	17
7.	Covid-19 के कारण मुर्गीपालन व्यवसाय में आने वाली चुनौतियां एवं उनका समाधान बी एस मीणा एवं मोहन लाल जाट	18-19
8.	उन्नत खेती का नया आयामः जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग नाना लाल माली, राहुल चोपड़ा एवं हनुमान सिंह	20-22
9.	ढिंगरी मशरुम का महत्व, पौष्टिक गुण एवं उत्पादन विधि सरिता, डी.एल. यादव एवं सोमदत्त	23-26
10.	गिलोय : एक प्रतिरक्षा बढ़ाने वाली बेल कनिका चौहान, एस.बी.एस. पांडेय, आंचल शर्मा एवं सी.के.आर्य	27-28
11.	किसान के लिए वरदान – मेहंदी धीरज सिंह, एम.के. चौधरी, ऐश्वर्या डुडी एवं चंदन कुमार	29-31
12.	संकर नेपियर घास कम लागत में कई वर्ष हरे चारे की उपलब्धता रामआसरे, नूपुर शर्मा एवं बी.एल. मीना	32
13.	किसानों की आय दोगुनी करने वाली कम लागत की तकनीकें सोमदत्त एवं सरिता	33-35
14.	उद्यमिता विकास में उपलब्धि अभिप्रेरणा की भूमिका के.सी. मीना, सुनील कुमार, सुभाष असवाल, राकेश कुमार बैरवा एवं सी.एल. मीना	36-38
15.	गर्भावस्था पशुओं एवं नवजात बछड़ों की वैज्ञानिक देखभाल बी. एस. मीणा एवं मुकेश चौधरी	39-41
16.	ब्रॉड बेड और फरो प्रणालीः जल एवं मृदा संरक्षण तकनीक प्रदीप कुमार, सी. के आर्य, मनोज कुमार शर्मा एवं राकेश कुमार बैरवा	42
17.	मेथी में होने वाले रोग और प्रबंधन डी.एल. यादव, प्रीति वर्मा, सरिता एवं प्रतिक जैसानी	43
18.	किसान का नया साथी – मेघदूत मोबाइल ऐप सुनिल कुमार, के. सी. मीणा, राकेश कुमार बैरवा, सुभाष असवाल एवं गीतिका शर्मा	44
19.	विश्व मृदा दिवस – 5 दिसम्बर, 2020 मनोज कुमार शर्मा	45

बागवानी फसलों में समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन

राहुल चोपड़ा एवं नाना लाल माली
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

फल प्रकृति का अनूठा उपहार है जिनसे हमें विटामिन, खनिज, एंटीऑक्सीडेंट और कई फाइटोन्यूट्रीएंट्स प्राप्त होते है। फल न केवल अपने रंग और स्वाद के कारण बल्कि अपने अनेक पोषक तत्वों की वजह से हमारे लिए बहुत लाभकारी है जो मानव शरीर को मजबूत बनाने और बीमारियों से मुक्त रखने में सहायता करते है। प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 140 ग्राम फल व 300 ग्राम सब्जियों का सेवन करना चाहिए। वर्ष 2017–18 के अनुसार भारत में 6514 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल पर 97055 हजार मैट्रिक टन फलों का उत्पादन हुआ। फल उत्पादन में भारत का चीन के बाद द्वितीय स्थान है। हमारे देश में कई दशकों से फल उत्पादन में कई गुणा वृद्धि हुई परन्तु अभी भी सतत् उत्पादन एवं उत्पादकता में कमी है। सतत् उत्पादन और उत्पादकता तभी संभव है, जब हम बागवानी में सर्वोत्तम तकनीकियों का उपयोग करें। उन तकनीकियों में एक तकनीक है समन्वित पोषक तत्वों का प्रबंधन।

उत्पादन में द्वितीय स्थान होने के बावजूद हमारा देश उत्पादकता में पिछड़ा हुआ है जिसका एक मुख्य कारण है सही पोषक तत्व प्रबंधन का आभाव। हमारे देश में पिछले कई वर्षो से किसानो का पूरा ध्यान केवल रासायनिक उर्वरको पर है। वे अंधाधुन्ध रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कर रहे है तथा पौधों को गोबर की खाद व कम्पोस्ट खाद देना तो भुल ही गये है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि पौधों को संतुलित मात्रा में पोषक तत्व प्राप्त नहीं हो पा रहे है, साथ ही अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों के लगातार उपयोग से मृदा उर्वरता खराब होती जा रही है अगर समय रहते पोषक तत्वों का सही प्रबंधन नहीं किया गया तो भविष्य में कई जटिल समस्याओ का सामना करना पड़ेगा।

पोषक तत्व क्या हैं ?

पोषक तत्व वो रासायनिक पदार्थ एवं यौगिक है जो पौधो के आंतरिक उपापचय एवं विकास के लिए अति आवश्यक है। प्रकृति में सत्रह मुख्य पोषक तत्व पाये जाते है जिनका अपना–अपना अलग– अलग महत्व है और वे पौधों के विकास के लिए आवश्यक हैं पोषक तत्वों को मात्र फसलों में डालने से ही उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ नहीं जाती अपितु उनका सही प्रबंधन करना आवश्यक है। अगर पोषक तत्वों का प्रबंधन सही तरीके से नहीं किया तो उसका दुष्प्रभाव फसलों, भूमिगत जल एवं मृदा पर पड़ता हैं।

पोषक तत्वों का प्रबंधन आवश्यक क्यों ?

आज इस महंगाई में रासायनिक उर्वरकों का मुल्य अधिक होता जा रहा है जिससे किसान भाइयों को फसल उत्पादन में अधिक लागत आ रही है तथा अत्यधिक उर्वरकों के उपयोग से मृदा उर्वरता कम होती जा रही है। अतः महंगे रासायनिक खादों का उचित प्रबंधन करना आवश्यक हो गया हैं जिससे किसानों को कम लागत पर अधिक लाभ मिल सकें और मृदा उर्वरता में सुधार हो। पोषक तत्वों के उचित प्रबंधन से तात्पर्य है– पौधों को उचित मात्रा, सही स्त्रोत, सही समय और सही स्थान पर पोषक तत्व उपलब्ध हो। अगर किसान इस मंत्र को समझ ले और अपने जीवन में उतार ले तो फसलों की पैदावार अच्छी होगी, भूमिगत जल प्रदूषण कम से कम होगा एवं मृदा का स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा। पोषक तत्व प्रबंधन विशेष रूप से बागवानी फसलों में एक कौशलपूर्ण कार्य है जिसके अंतर्गत पोषक तत्वों को सही मात्रा, सही स्रोत, सही समय और सही स्थान पर डालने के लिए उस क्षेत्र कि मृदा, जलवायु एवं फसल प्रबंधन के बारे में जानकारी होना आवश्यक है।

समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन

वर्तमान समय में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन का प्रचलन बढ़ गया है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन से अभिप्राय है कि पौधों को पोषण देने वाले सभी स्रोतों को समन्वित रूप से उपयोग करते हुए वांछित फसल उत्पादन एवं उत्पादकता प्राप्त करना एवं मृदा उर्वरता को बनाये रखना। समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन एक ऐसी विधि है जिसमें कार्बनिक, अकार्बनिक और जैविक स्रोतों के मिश्रित उपयोग द्वारा पौधों को उचित मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध करवाये जाते हैं। जिससे सतत् उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है साथ ही साथ मृदा उर्वरता में भी बड़ोतरी होती है। समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन पर्यावरणीय प्रदुषण को भी कम करने में सहायता करता हैं। समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन किसानो के लिये अमृत समान है।

समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन के उद्देश्य

1. उर्वरक उपयोग क्षमता को अधिक करना
2. मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बढ़ाना
3. रासायनिक उर्वरको कि मांग को कम करना
4. जैविक तत्वों का मृदा में पुनर्भरण करना
5. आपूर्ति किये गए पोषक तत्वों एवं पौधों द्वारा उपयोग किये गए तत्वों के बीच संतुलन बनाये रखना
6. मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता को बढ़ाना

समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन के घटक

1. रासायनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग : किसानो को खेतों में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अनुसार करना चाहिए। किसानों को चाहिये कि वे फसलों में मुख्य पोषक तत्वों के साथ–साथ सुक्ष्म पोषक तत्वों की उचित मात्रा का भी प्रयोग करें ताकि उत्पादन में वृद्धि हो तथा पोषक तत्वों की कमी से होने वाली अनेक बीमारियों को भी रोका जा सके।

2. जैविक खाद तथा हरी खाद का उपयोग : पौधे लगाने से पुर्व व पौधे लगाने के बाद किसानों को उचित मात्रा में जैविक खाद जैसे गोबर की खाद, केंचुआ खाद, कम्पोस्ट आदि का प्रयोग करना चाहिए ताकि पौधें के लिये आवश्यक सभी पोषक तत्व लम्बे समय तक पौधे को मिलते रहे। इसके प्रयोग से मृदा भुरभूरी बनी रहती है तथा हवा का भी उचित संचार होता हैं।

3. फसल अवशेषों का उचित प्रबन्धन : पौधों की पत्तियों व टहनियों को खेत में बिछाकर उसे पलवार (मल्च) की तरह प्रयोग कर सकते है। इससे खेत में खरपतवारों का उगना कम हो जायेगा साथ ही मृदा का तापमान एवं नमी भी उचित बनी रहेगी जिससे अनेक लाभदायक सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होगी। जब ये मल्च अपघटित हो जाती है तो मृदा में पौधें के लिये आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा में भी वृद्धि करती है।

4. जीवाणु खादों का उचित समय पर उपयोग : पौध को खेत में लगाने से पूर्व उसे उचित जीवाणु खाद के घोल में डूबाकर रखना चाहिए और उसके बाद उसका रोपण करना चाहिए। इसके लिये फॉस्फोरस घोलक जीवाणु खाद का प्रयोग करते है। ये जीवाणु अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित करके पौधों को प्रदान करते हैं। मृदा के अन्दर वैसीकुलर अरबस्कुलर माइकोराइजा (वी.ए.एम.) का भी प्रयोग किया जाता है। ये एक कवक है जो मृदा से फास्फोरस तथा अन्य पोषक तत्व जैसे जिंक, ताम्बा, लोहा आदि को अवशोषित करती है और पौधे को प्रदान करती है। कुछ प्रमुख सूक्ष्मजीवों की प्रजातियां तालिका 1 के अनुसार है, जिनका उपयोग जीवाणु खाद के लिये किया जाता है।

तालिका 1. लाभदायक सूक्ष्मजीवों की प्रजातियां

नत्रजन स्थितिकारक	फॉस्फोरस विलयकारी		जैविक पदार्थ अपघटक	
	फॉस्फोरस विलयकारी	फॉस्फोरस अवशोषक	सेल्युलोलाइटिक	लीग्नोलाइटिक
1 एजेटोबैक्टर	1 बैसिलस पोलीमिक्सा	1 एस्परजिलस अवामोरी	1 ट्राइकोडरमा	1 एगरिकस
2 फ्रेंकिया	2 स्यूडोमोनास स्ट्राइटा	2 एस्परजिलस नाइगर	2 साइटोफेगा	2 पोलिपोरस
3 एलनस	3 बैसिलस मेगाटेरियम	3 माइकोराइजा(वी.ए.एम.)	3 पैसीलामायस	3 फॉमस
4 माइरिका	4 बैसिलस सबटिलिस			
5 एजोस्पारिलम				

समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन के लिये आवश्यक है कि किसानों को अपने खेत की मृदा के बारे में सही जानकारी हो। यह जानकारी तभी सम्भव है जब किसान समय–समय पर मृदा की जाँच करवाये। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन के लिये मृदा जांच बहुत आवश्यक है।

मृदा का परीक्षण

पोषक तत्वों के प्रबंधन का मुख्य आधार है मृदा का परीक्षण। पोषक तत्वों के प्रबंधन के लिए आवश्यक है कि मृदा का समय पर परीक्षण किया जाये ताकि मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की जानकारी कृषक को मिल सके और पोषक तत्वों का प्रबंधन सरलता से किया जा सके। वर्ष 2015 से भारत सरकार द्वारा मृदा स्वास्थय कार्ड योजना चलाई गयी है जिसका मुख्य उद्देश्य है कि भारत के प्रत्येक कृषक के पास मृदा स्वास्थ्य कार्ड हो ताकि उसे अपने खेत कि वास्तविक स्थिति का पता चल सकें और किसान भाई कार्ड कि सहायता से पोषक तत्वों का सही प्रबंधन कर सके। किसी भी क्षेत्र का प्रतिनिधिक नमूना लेना मृदा परीक्षण का आवश्यक पहलू है। सामान्यतः मृदा का 500 ग्राम नमूना लिया जाता है जिससे प्रयोगशाला में मृदा का संपूर्ण परीक्षण किया जा सकता है।

उद्देश्य :

- प्रति ईकाई क्षेत्र में कम लागत में कृषि उत्पादन ।
- संतुलित खाद एवं उर्वरक प्रयोग को बढावा ।
- मिटटी में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा के अनुसार फसल विशेष की पोषक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु खाद एवं उर्वरक की सिफारिश ।
- लवणीय व क्षारीय समस्याग्रस्त क्षेत्रों की पहचान कर, भूमि सुधार हेतु सिफारिश ।
- क्षेत्रवार उर्वरकता स्तर का आंकलन कर मानचित्रीकरण
- बोई जाने वाली फसलों के चयन में सहायता ।

नमूना संग्रहण करने का तरीका

शस्य फसलों, सब्जियों तथा फूल वाली फसलों के लिए नमूने 6 से 9'' (15 से 30 सेमी.) की गहराई तक तथा लॉन के लिए 2'' (5 सेमी.) की गहराई तक V आकर का कट लगा कर लिया जाता है। किन्तु बहुवर्षीय फल वृक्षों में अधोमृदा का आकलन आवश्यक है। अतः विभिन्न गहराइयों से क्रमबद्ध नमूने लेने आवश्यक है जैसे 0–30 सेमी., 30–60 सेमी., 60–90 सेमी. तथा 90–120 सेमी.। सामान्यतः बहुवर्षीय पौधे उगाने हेतु मृदा के 1 मीटर गहराई तक नमूने लिए जाते है। अलग–अलग गहराई के नमूनों को अलग–अलग साफ थैलियों में भरकर उसके साथ

नाम, पता, सिंचित, असिंचित क्षेत्र का विवरण, उगाई जाने वाली फसलों का विवरण आदि जानकारी लिखकर प्रयोगशाला में भेजा जाना चाहिए। पेड़ तथा झाड़ के नीचे, सिंचाई की नालियां, कुंए अथवा मेड़ों के आसपास, खाद की ढेर के पास, दलदली भूमि आदि जगहों से मृदा के नमूने नहीं लेने चाहिए।

नमूने लेने का समय

सामान्यतः फसलों में मृदा नमूना बुवाई से पूर्व ले लेना चाहिए ताकि उर्वरकों की सिफारिश सही की जा सके। फल का बगीचा लगाने के पूर्व मृदा परीक्षण अनिवार्य हैं। बगीचों में मृदा का नमूना लेने का सही समय मई–जून का महीना है। किसान भाईयों को अपनी मृदा का विश्लेषण 1 वर्ष के अन्तराल पर करवाते रहना चाहिए।

मृदा परीक्षण के आधार पर पोषक तत्वों का प्रबंधन

मृदा परीक्षण के मान सभी पोषक तत्वों की उपलब्धता का सूचक है। मृदा परीक्षण से किसी भी पोषक तत्व की मृदा में कमी या अधिकता का पता चल जाता है। मृदा परीक्षण के आधार पर ही पोषक तत्वों का सही प्रबंधन किया जाना चाहिए। तालिका 2 में पोषक तत्वों के निर्धारित मान दिए हुए है उन निर्धारित मानो की सहायता से हम पोषक तत्वों का सही प्रबंधन कर सकते है

पोषक तत्व प्रबंधन का महत्व

किसी भी फसल के लिये पोषक तत्व प्रबंधन बहुत महत्वपुर्ण होता है और बागवानी फसलों में तो इसका महत्व और ज्यादा बढ़ जाता है क्योंकि इसमें पौधें थोडे दूर–दूर होते है और एक–एक पौधें को पोषक तत्व देने पड़ते है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करने से न केवल मृदा का स्वास्थ्य बना रहता है अपितु किसान की आय में भी बढ़ोतरी होती है। पोषक तत्वों के सही प्रबंधन से पौधों के द्वारा पोषक तत्व को उपयोग करने की क्षमता बढ़ती है तथा मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता में भी सुधार होता है। पोषक तत्वों के सही प्रबंधन से उर्वरकों के द्वारा होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदुषणों में भी कमी आती है।

साराशं : सार यह है कि किसानों को पोषक तत्वों का संतुलित रूप से उपयोग करना चाहिए ताकि उनके खेत पर उपलब्ध अधिकतर स्त्रोतों का भी सही उपयोग हो सके और उन्हें आर्थिक लाभ हो। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन को अपनाने से रासायनिक उर्वरकों की मांग में कमी आयेगी। फसल उत्पादन में टिकाऊ पन के साथ–साथ फसल गुणवत्ता में भी सुधार होगा। पर्यावरण स्वस्थ रहेगा तथा मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव भी धीरे–धीरे समाप्त हो जायेंगें। यदि एक पंक्ति में कहा जाये तो हम कह सकते है समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन कृषक एवं आम नागरिक के लिए एक वरदान है।

तालिका 2. पोषक तत्वों के निर्धारित मान

क्र.सं.	पोषक तत्व का नाम	मृदा उर्वरता स्तर		
		सामान्य	मध्यम	अधिक
1.	पी.एच.	7 से 8.5	8.5 से 9.5	9.5 से अधिक
2.	ई.सी. (डे.सी./मीटर)	1.5 तक	1.5 से 3.0	3.0 से अधिक
		कमी	**मध्यम**	**अधिकता**
3.	जैविक कार्बन (प्रतिशत)	0.5 से कम	0.5 से 0.75	0.75 से अधिक
4.	उपलब्ध नत्रजन (कि.ग्रा. प्रति है.)	280 से कम	281 से 560	560 से अधिक
5.	उपलब्ध फास्फोरस (कि.ग्रा. प्रति है.)	23.0 से कम	23. से 56	56 से अधिक
6.	उपलब्ध पोटास (कि.ग्रा. प्रति है.)	120 से कम	121 से 280	280 से अधिक
7.	सल्फर (पी.पी.एम.)	10.0 से कम	–	10.0 से अधिक
8.	जस्ता (पी.पी.एम.)	0.6 से कम	–	0.6 से ज्यादा
9.	लोहा (पी.पी.एम.)	4.5 से कम	–	4.5 से ज्यादा
10.	तांम्बा (पी.पी.एम.)	0.2 से कम	–	0.2 से ज्यादा
11.	मैंगनीज (पी.पी.एम.)	2.0 से कम	–	2.0 से ज्यादा
12.	बोरोन (पी.पी.एम.)	0.5 से कम	–	0.5 से ज्यादा

धनिये की फसल को कीट-रोगों से बचायें

आर. एन. शर्मा, उदयभान सिंह एवं जे.के. गुप्ता
कृषि महाविद्यालय, भरतपुर, राजस्थान

विश्व में मसाला उत्पादन एवं मसाला निर्यात में भारत का प्रथम स्थान है। इस समय देश में 13,95,560 हैक्टर क्षेत्रफल से 12,33,478 टन प्रमुख बीजीय मसालों का उत्पादन हो रहा है। राजस्थान में कुल 5.90 लाख हेक्टयर क्षेत्र में मसालों की खेती की जाती है जिससे 6.47 लाख टन उत्पादन होता है। भारत में धनिये की खेती प्रमुख रूप से राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु व आंध्रप्रदेश में की जाती है। राजस्थान में धनियाँ एक प्रमुख बीजीय मसाला फसल है। इसकी खेती मुख्यतः कोटा, झालावाड, बूंदी, सवाईमाधोपुर, बारां, अलवर, सीकर, जयपुर व चित्तौडगढ में की जाती है। देश के कुल धनियाँ उत्पादन में प्रदेश का 40–50 प्रतिशत योगदान है। इसमें लगने वाले कीट–रोगों की वजह से इनके उत्पादन की गुणवत्ता व मात्रा पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है। यदि उचित समय पर इनमें लगने वाले कीट व रोगों की पहचान करके उनकी रोकथाम की जाये तो कीट व रोगों से होने वाले नुकसान में कमी करके उत्पादन की मात्रा व गुणवत्ता दोनों को बढाया जा सकता है।

प्रमुख रोग एवं उनकी रोकथाम

1. उखटा : यह रोग पौधों की जडों में लगता है। यह रोग फसल की किसी भी अवस्था में हो सकता है लेकिन बुवाई के एक माह में अधिक प्रकोप होता है। रोग ग्रासित पौधा मुरझाकर सूख जाता है। यह रोग फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम फार्मा स्पिशिज कोरिऐन्ड्राई नामक फफूंद से होता है।

रोकथाम

(अ) गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करे।
(ब) बीज हमेशा स्वस्थ फसल का ही प्रयोग करे।
(स) तीन वर्षीय फसल चक्र अपनावें।
(द) बीजों को बुवाई से पूर्व थाइरम 75 डब्ल्यू.एस. तथा कार्बन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 1:1 भाग के हिसाब से 3 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बुवाई करे या ट्राइकोडरमा (टाल्क पाऊडर आधारित) 10 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से बीजोपचार करे।

2. छाछ्या/चूर्णी फफूंद : इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की पत्तियों व टहनियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर पूरा पौधा चूर्ण से ढक जाता है जिससे पौधों पर या तो बीज बनते ही नहीं हैं या बहुत कम व छोटे आकार के बीज बनते हैं जिससे बीजों की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। यह ईरीसाइफी पोलीगोनी नामक फफूंद जनित रोग है।

रोकथाम

(अ) इस रोग की रोकथाम हेतु खेत की साफ–सफाई करें।
(ब) रोग के लक्षण दिखई देने पर गन्धक के चूर्ण का 25 किलो प्रति हेक्टर की दर से भुरकाव करना चाहिए अथवा
(स) घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत या डाईनोकेप 48 ई.सी. 0.1 प्रतिशत या हेग्जाकोनाजोल 5 ई.सी. का 400–500 लीटर घोल प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिडकाव करना चाहिए। आवश्यक होने पर 15–20 दिन बाद छिडकाव को दोहराना चाहिए।

3. झुलसा : इस रोग का प्रकोप होने पर पौधों के तने व पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं तथा पत्तियां झुलसी हुई दिखाई देती हैं। वर्षा या नमी होने पर रोग की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं। यह रोग आल्टरनेरिया पूनेन्सिस नामक फफूंद द्वारा होता है।

रोकथाम

इस रोग की रोकथाम हेतु काब्रेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 0.1 प्रतिशत या मेन्कोजेब 75 डब्ल्यू.पी. 0.2 प्रतिशत या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू.पी. 0.3 प्रतिशत फफूंदनाशी का घोल बनाकर 400–500 लीटर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिडकाव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर छिडकाव को दोहरावें।

4. तना पिटिका : रोग ग्रसित पौधे की पत्तियों, वृंत तथा तने पर पिटिकाऐं गॉल्स बन जाती हैं एवं पौधे पीले व इनकी बढवार रुक जाती है। इस रोग के प्रकोप से बीज बेडौल हो जाते हैं जिससे गुणवत्ता व पैदावार में कमी हो जाती है। वातावरण में नमी की अधिकता होने पर इस रोग का प्रकोप बढ जाता है। यह रोग प्रोटोमाईसिस मेकोस्पोरस फफूंद द्वारा होता है।

रोकथाम

(अ) यह रोग मृदा जनित कवक द्वारा होता है अतः इस रोग की रोकथाम के लिए खेत को साफ रखना चाहिए।

(ब) रोग रोधी किस्म जैसेः आर.सी.आर. 41, अजमेर धनियां–1 को बोयें।

(स) बीजों को बुवाई से पूर्व काब्रेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 1.5 ग्राम एवं थाइरम 75 डब्ल्यू.एस. 1.5 ग्राम (1:1) से प्रति किलो की दर से उपचारित करें।

(द) खडी फसल में बीमारी के लक्षण दिखाई देने पर काब्रेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. का 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिडकाव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन बाद छिडकाव को दोहरावे। फूल आते समय इसका प्रयोग नहीं करें।

प्रमुख कीट एवं उनकी रोकथाम

1. मोयला/चैंपा/एफिड : धनिये की फसल पर मुख्यतः पुष्प आते समय व बीज बनते समय इस कीट का आक्रमण होता है। यह कीट पौधे के कोमल भागों से रस चूसते हैं जिससे उपज में भारी कमी आ जाती है।

रोकथाम : इस कीट की रोकथाम हेतु मैलाथियान 50 ई.सी. या डाइमिथोएट 30 ई. सी. का 1 मि.ली. या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. का 0.5 मि.ली. या क्यूनालफॉस 25 ई.सी. का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर सायंकाल के समय फसल पर छिडकाव करना चाहिए जिससे मधुमक्खियों को हानि न हो।

2. कट वर्म एवं वायर वर्म : इस कीट की सूण्डी भूरे रंग की होती है। शाम के समय यह सूण्डी पौधों को जमीन की सतह के पास से काटकर गिरा देती है। इसका प्रकोप फसल की शुरू की अवस्था में होता है जिससे फसल को अधिक नुकसान पहुंचाता है।

रोकथाम : इस कीट की रोकथाम हेतु मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण को 20–25 किलो प्रति हेक्टर की दर से भूमि में जुताई के समय मिलावे।

3. माईट्स (बरूथी) : इसका प्रकोप दाना बनते समय होता है तथा पूरा पौधा हल्का पीला रंग का हो जाता है। इसका प्रकोप मुख्यतः नई पत्तियों व पुष्पक्रम पर होता है। पौधा छोटा रह जाता है। यह छोटा कीट पत्तियों की निचली सतह पर दिखाई देता है।

रोकथाम : बरूथी के अधिक प्रकोप वाले स्थानों पर अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक बुवाई करने से इस कीट से फसल को कम हानि होती है। इस कीट की रोकथाम हेतु स्पाइरोमेसीफेन 22.9 एस.सी. का 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर सायंकाल के समय फसल पर छिडकाव करना चाहिए।

सतत् उत्पादन एवं सुरक्षित पर्यावरण हेतु जैविक खाद प्रबन्धन

सुभाष असवाल, के.सी. मीणा, सुनिल कुमार एवं पप्पू खटीक
कृषि विज्ञान केन्द्र, अन्ता–बारां

खाद्य सुरक्षा हेतु सतत् एवं गुणवत्ता युक्त उत्पादन करना एवं सुरक्षित पर्यावरण हेतु फसल अवशेष एवं जीवांश पदार्थो का कृषि हेतु लाभकारी बनाना मृदा स्वास्थ्य एवं आर्थिक दृष्टि से परम आवश्यक है। कृषि में कार्बनिक खादों के कम प्रयोग, फसल अवशेष जलाने, कृषि रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग, अकुशल जल प्रबन्धन से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुण धर्म फसल उत्पादन के लिए प्रतिकूल हो रहें है। फसलों की लगातार अच्छी पैदावार लेने एवं मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिए पोषक तत्वों की पूर्ति तथा उर्वरकों व जीवांश खादों के संतुलित प्रयोग जरुरी है। अतः स्वस्थ मृदा, सतत् फसल उत्पादन एवं सुरक्षित पर्यावरण हेतु रासायनिक उर्वरकों के साथ जीवांश खादें, जैसे गोबर की अच्छी पक्की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खादें जैसे सनई, ढेंचा, ग्वार, मूंग आदि का समावेश कर समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन करने से न केवल उत्पादकता में वृद्धि होती है वरन् उर्वरकों का समुचित प्रयोग के साथ–साथ सतत् उत्पादन का आधार मृदा स्वास्थ्य भी बना रहता है। मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने एवं मृदा संरचना, जलधारण क्षमता, संतुलित पोषक तत्वों आदि के लिए जीवांश पदार्थो का विशेष महत्व है। मृदा में लाभदायी सूक्ष्म जीवाणुओं की उपलब्धता एवं सक्रियता के लिए जीवांश पदार्थ की मात्रा 0.5 प्रतिशत से कम होने पर मृदा स्वास्थ्य एवं उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, अतः इस दृष्टि से भी जीवांश पदार्थों का महत्व बढ़ जाता है। मृदा में जीवांश पदार्थों की मात्रा बनाये रखना परम आवश्यक है। प्रायः यह पशुओं के मलमूत्र, बिछावन तथा पशुओं द्वारा छोडा गया चारा एवं फसल के अवशेष आदि के सड़ाने से प्राप्त होता है। प्रमुख खाद एवं उसमें पोषक तत्व मान निम्न तालिका 1 में दर्शाया गया है।

तालिका 1. प्रमुख खाद एवं उनमें पोषक तत्व मान

क्र.सं.	प्रमुख खाद	प्रमुख पोषक तत्व (प्रतिशत)		
		नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटेशियम
(अ) स्थूल जीवांश खाद				
1.	गोबर की खाद (FYM)	0.5	0.25	0.5
2.	केंचूए की खाद या वर्मीकम्पोस्ट	1.5-2.5	1.5-2.0	1.0-1.5
3.	कम्पोस्ट (शहरी)	1.5	1.0	1.0
4.	कम्पोस्ट (देहाती)	1.5	1.0	1.5
5.	नैडेप कम्पोस्ट	0.5-1.5	0.5-0.9	1.2-1.4
6.	हरी खाद (सनई, ढ़ैचा)	0.5-0.7	0.1-0.2	0.6-0.8
(ब) सांद्रित जिवांश खाद				
7.	शुष्क रक्त	10-13	1.15	0.6-0.8
8.	मछली की खाद	4-10	3-9	0.3-1.5
9.	ग्वानों पक्षी	7-8	11-14	2-3
10.	शुष्क अवमल	5-6	3-3.5	0.5-0.7
11.	सींग व खुर की खाद	14	1.0	-
(स) खलियाँ				
12.	मूंगफली की खली	7.2	1.5	1.3
13.	तिल की खली	6.3	2.0	1.3
14.	सरसों की खली	5.1	1.8	1.1
15.	कुसुम (छिलका रहित)	7.9	2.2	1.3
16.	अलसी की खली	5.5	1.5	1.2
17.	कपास के बिनौले की खली (छिलका रहित)	6.4	2.9	2.2
18.	नीम की खली	5.2	1.0	1.4
19.	बिनौले की खली (छिलका रहित)	4.0	1.9	1.6
20.	अरण्डी की खली	4.3	1.8	1.3
21.	कुसुम (छिलका सहित)	4.9	1.4	1.2

जैविक खाद बनाने की विधियां

1. गोबर की ढेर विधि

यह एक परम्परागत विधि है जिसमें गोबर व पशुमूत्र सहित बिछावन को खुले में ढ़ेर किया जाता है। यह विधि दोषपूर्ण है, क्योकि खुले में ढेर लगाने से पोषक तत्वों की धूप व निक्षालन से क्षति, खाद पूरा नही पकता, समय अधिक लगना, खेत में खरपतवारों व दीमक का प्रकोप बढ़ना, मक्खी मच्छर आदि का प्रकोप बढ़ना तथा परिवेश की स्वच्छता में कमी आती है।

2. गड्डा विधि

खाद तैयार करने की यह एक उत्तम विधि है इसमें पशुओं की संख्या के अनुसार गड्डा खोद कर गोबर एवं फसल अवशेष की तह बनाकर अच्छी किस्म की खाद तैयार की जाती है। इसमें गड्डा बनाने के लिये ऊंचा स्थल चुनते है ताकि वर्षा जल का भराव नही हों। गड्डे की गहराई हमेशा 1 मीटर, चौड़ाई 2 मीटर तथा लम्बाई 3 से 5 मीटर अथवा आवश्यकतानुसार रखते है। गड्डे की भराई के लिए प्रतिदिन गोबर, पशुमूत्र सहित बिछावन तथा फसलों के अवशेष जैसे–पुआल, भूसा तथा घर का कूड़ा–कचरा को भली–भाँति मिलाकर गड्डे मे एक छोर से डालना शुरू करते है। इस प्रकार भूमि की सतह से 50 से.मी. ऊपर तक गड्डें भर जाने पर इसकी ऊपरी सतह को मिट्टी के गारे की परत से भलीभांति ढ़क देते है। इसके बाद इस तरह से दूसरे गड्डा का प्रयोग करते है। इस प्रकार जब तक दूसरे गड्डा भरेगा, पहले गड्डे की खाद सड़कर तैयार हो चुकी होगी, जिसे खेते में डालकर गड्डे को पुनः खाद बनाने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। गड्डा खेत/गांव की दक्षिण–पूर्व दिशा में बनाना स्वच्छता की दृष्टि से ठीक रहता है।

3. कम्पोस्ट खाद

कम्पोस्ट बनाना एक जैविक प्रक्रिया है जिसमें सूक्ष्म जीवों द्वारा कार्बनिक पदार्थो, खरपतवार, भूसा, पुआल, फसलों के अवशेष, पशुओं की बिछावन व मल–मूत्र अवशेष, पशुचारा आदि को सड़ाकर उनका कार्बन–नाइट्रोजन अनुपात घटाया जाता है। इस प्रकार भली–भांति सड़ी हुई खाद को कम्पोस्ट कहते है। गोबर की खाद की तुलना में कम्पोस्ट में कार्बनिक पदार्थ और प्रमुख पोषक तत्वों की मात्रा अधिक पायी जाती है एवं मृदा को उर्वरक बनाये रखने में अधिक कारगर सिद्ध होती है। कम्पोस्ट कई विधियों से बनाया जाता है जैसे– समृद्व कम्पोस्ट, नेडेप कम्पोस्ट, सुपर कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट इत्यादि।

3.1 समृद्ध कम्पोस्ट

पूसा संस्थान, नई दिल्ली ने कम फॉस्फेट वाले रॉक फॉस्फेट एवं अनुपयुक्त माइका के कचरे से समृद्व कम्पोस्ट तैयार करने की तकनीक विकसित की है।

कम्पोस्ट की मात्रा के अनुसार गड्ढे का आकार रखना चाहिए। सर्वप्रथम फसलों के अवशेष एवं अन्य प्रकार से कूडे–कचरें की 20 से.मी. की परत बिछाते है। इनके ऊपर रॉक फॉस्फेट की परत डालते है, फिर अनुपयुक्त माइका की परत डालते है। तदोपरान्त ताजा गोबर के पानी में घोल बनाकर उस पर छिड़क देते है। समय–समय पर पानी छिड़क कर उपयुक्त नमी 60 प्रतिशत बनाये रखते है। हर एक महिने के अन्तराल पर गड्ढे में भरी हुई सामग्री को पलट देना चाहिये। इस प्रकार चार महीने में समृद्व कम्पोस्ट बन कर तैयार हो जाती है।

3.2 नेडेप कम्पोस्ट

नेडेप विधि में कम्पोस्ट जमीन के ऊपर ईट सीमेन्ट का पक्का ढांचा बनाकर तैयार की जाती है। जमीन के ऊपर जहां पानी इकट्ठा नही होता हो वहां 12 फीट लम्बाई, 5 फीट चौड़ाई तथा 3 फीट गहराई का आयताकार पक्का ढांचा तैयार किया जाता है। दीवार की मोटाई 9 इंच से 12 इंच रखी जाती है तथा उसमें हवा के आवागमन हेतु प्रत्येक दीवार में लम्बाई की तरफ 7–8 तथा चौड़ाई की ओर 4–5 छिद्र रखे जाते है। ढांचे का फर्श भी ईंटों/पत्थर का पक्का बनाया जाता है तथा दीवारों व फर्श को सीमेन्ट द्वारा पक्का प्लास्टर किया जाता है, जिससे पोषक तत्व रिसकर नष्ट न हो।

प्रथम भराई

सबसे पहले 10–12 किग्रा. गोबर को 100–125 लीटर पानी में घोल बनाकर तैयार ढांचे के अन्दर की दीवारों व फर्श पर छिड़ककर फसल अवशेषों की 15 सेमी. मोटी प्रथम परत बनाई जाती है। 10–12 किग्रा. गोबर को 100–125 लीटर पानी में घोलकर पहली परत पर इस प्रकार छिड़के की यह पूरी तरह से भीग जायें। दूसरी परत के ऊपर तीसरी परत (खेत की छनी हुई बारीक मिट्टी लगभग एक इंच मोटी) लगा देते है तथा पानी छिड़क कर गीला कर देते है। तदुपरान्त इसी क्रम में टांके को भरते चले जाते है तथा टांके की ऊपरी सतह को झोपड़ीनुमा आकृति एक–डेढ़ फीट ऊँचाई तक भरी जाती है। अन्त में ढलवा आकृति पर 5–7 सेमी. मोटी परत बारीक रेत की लगाते है व मिट्टी गोबर के मिश्रण का लेप लगाकर टांके को बन्द कर देते है।

तालिका – 2 एक टन समृद्व कम्पोस्ट बनाने के लिए कच्चे माल की आवश्यकता (कि.ग्रा.)

आवश्यक सामग्री	मात्रा (कि.ग्रा.)
फसलों के अवशेष एवं अन्य प्रकार का कूडा कचरा	1000
निम्नस्तर का रॉक फॉस्फेट (फॉस्फेट 20 प्रतिशत से कम)	200
अनुपयुक्त माइका (पोटाश 10 प्रतिशत से कम)	200
पशुओं का ताजा गोबर	1000

द्वितीय भराई

पहली भराई के 15–20 दिन बाद जब गड्ढा बैठ जावें तब ऊपर बताये गये क्रमानुसार 1.5 फीट ऊँचाई तक पुनः परत लगाते है। मिट्टी व गोबर के मिश्रण का पूर्व की भांति लेप लगाकर बन्द कर देना चाहिए। यदि बाद में दरारें आती है तो पानी छिड़क कर बन्द करना चाहिए। समय–समय पर पानी छिड़क कर नमी को बनाये रखें 100–120 दिनों में कार्बनिक पदार्थ सड़कर तैयार (काले–भूरे रंग का) हो जाता है। इस विधि द्वारा एक गड्डे से 12–15 टन तक कम्पोस्ट खाद प्रतिवर्ष तैयार की जा सकती है।

3.3 सुपर कम्पोस्ट

इस विधि में कम्पोस्ट भूमि के अन्दर गड्डा बनाकर तैयार की जाती है। कम्पोस्ट तैयार करने की यह एक अवायुवीय विधि है। कम्पोस्ट में फास्फोरस की मात्रा बढ़ाने व फास्फोरस को लम्बे समय तक पौधें के लिए उपलब्ध रूप में बनाये रखने के उद्देश्य से कार्बनिक पदार्थों के साथ जिप्सम, रॉक फास्फेट या सिंगल सुपर फास्फेट मिलाकर तैयार की गई कम्पोस्ट ''सुपर कम्पोस्ट'' कहलाती है।

आवश्यक सामग्री

1 फसल अवशेष, गोबर, मूत्र पुआल, पशु बिछावन आदि।
2 जिप्सम 100 किग्रा. या रॉक फास्फेट 200 किग्रा. या सिंगल सुपर फास्फेट 50 किलोग्राम
3 जीवाणु कल्चर जिसमें अवायुवीय परिस्थितियों में सड़ाने वाले जीवाणु हों।

ऐस स्थान जहाँ पर वर्षा का पानी रूकता नही हो वहां पर 10' x 6' x 3' आकार का 1/2' ढाल वाला गड्ढा तैयार करें। इस गड्डे के तल पर एक इंच मोटी परत सड़े गोबर की लगावे। फिर इसके ऊपर 1 फीट ऊंचाई तक गोबर के साथ पशु बिछावन, सूखी पत्तियां, खरपतवार, घांस–पात, पशुओं का बचा हुआ चारा, कड़बी आदि जो भी उपलब्ध हो डाले। इसे पानी छिड़क कर नम करें व इसके ऊपर 17 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट या 47 किग्रा. रॉक फास्फेट व 33 किग्रा. जिप्सम की परत लगावें। यह प्रक्रिया दो बार पुनः दोहरावें। इस गड्डे के ऊपर गुम्बदाकार रूप में कचरा भरें व मिट्टी की हल्की परत से ढ़क कर मिट्टी व गोबर मिश्रण का लेपन करें। करीब 3–4 माह में सुपर कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाता है।

3.4 वर्मी कम्पोस्ट

वर्मी कम्पोस्टिंग में केंचुओं व सूक्ष्म जीवों से कार्बनिक अवशेष व गोबर को उपजाऊ खाद वर्मी कम्पोस्ट में बदला जाता है। केंचुओं के द्वारा गोबर, फसलों के अवशेष एवं अन्य कार्बनिक पदार्थो के विघटन से बनी खाद को, जिसमें केंचुओं की कास्टिंग, मल, केचुऐं कोकून, लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु एवं आवश्यक पोषक तत्व इत्यादि पाये जाते है, वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते है। उपयुक्त तापमान, नमी, हवा एवं जैविक पदार्थ मिलने पर केंचुऐ अपनी संख्या बढ़ाने के साथ–साथ गोबर एवं वनस्पति अवशेष आदि को सड़ाकर जैविक खाद के रूप में परिवर्तित करते हैं। केचुओं की आईसीनिया फोइटिडा प्रजाति वर्मी कम्पोस्टिंग के लिए उपयुक्त होती है क्योंकि इस प्रजाति की कार्बनिक पदार्थो को शीघ्र व अधिक मात्रा में कम्पोस्ट बनाने की क्षमता और वातावरण के उतार–चढ़ाव सहन करने की क्षमता, प्रजनन एवं वृद्धि दर अधिक है। केंचुओं की खाद बनाने हेतु आवश्यक मूल मंत्र यह है कि छाया, नमी, ठण्डा गोबर, 15 दिन में उलट–पलट करना कम्पोस्टिंग प्रक्रिया को शीघ्रता से पूरा करने के लिए जरूरी है।

छांया शेड

वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए हमेशा ऊँचे स्थान का चुनाव करे जहां वर्षा जल का भराव नही होता हों। उपयुक्त तापमान व छांया बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार कम लागत की टापरी या सीमेन्ट चादर द्वारा अस्थाई या स्थाई छांया शेड तैयार कर लेते है। छांया शेड में सीमेन्ट तथा ईंटों से पक्की क्यारियों बनाई जाती है। प्रत्येक वर्मी बेड की लम्बाई 3 मीटर, चौड़ाई 1 मीटर एवं उंचाई 30–50 सेमी. रखें। वर्मी बेड क्यारियों को तेज धूप व वर्षा से बचाने के लिए छप्पर और चारों ओर से हरे नेट से ढकना आवश्यक है।

भराव सामग्री की तैयारी

वर्मी बेड को भरने के लिए गोबर, फसल अवशेष, पेड पौधों की पत्तियां, सब्जियां व फलों के छिलके आदि अपघटनशील पदार्थो का चुनाव करते है। इन पदार्थों को वर्मी बेड में भरने से पहले ढेर बनाकर सड़ने के लिए रखा जाना आवश्यक है। कार्बनिक पदार्थों के ढेर पर पानी छिड़कर छोड दिया जाता है। 15–20 दिन बाद आंशिक रूप से अपघटित पदार्थ मिलता है जो कि केंचुओं के लिए अच्छा भोजन माना जाता है। जब क्यारियों को भरने के लिए सिर्फ गोबर काम में लेना हो तो पहले गोबर में 5–6 दिन तक दिन में एक बार पानी का छिड़काव करते हुए दो दिन के अन्तराल पर पंजे की सहायता से उलट–पुलट करते हैं, जिससे गोबर से निकलने वाली गैस बाहर निकल जाये और वायु संचार तथा गोबर का तापमान ठीक हो जायें।

वर्मी बेड को भरना

तैयार बैड पर फसल अवशेष की 3–4 इंच मोटी परत बिछाकर इसके ऊपर पहले से तैयार ठंडा किया हुआ गोबर व आंशिक रूप से अपघटित पदार्थ को 50 सेमी की ऊंची परत लगाते हैं। इसके ऊपर उचित नमी बनाये रखने के लिए पानी का छिड़काव करते है। जब बेड के सभी भांगों में तापमान 25–30 डिग्री सेल्सियस हो जाये, उस समय 3 किग्रा. केंचुऐ (आइसीनिया फोर्डटिडा) प्रति 10x3x1 फीट बैड के हिसाब से ढेर में छोड़ देवे और पानी छिड़क कर प्रत्येक क्यारी को गीली बोरियों से ढक देते है। गुणवत्ता बढ़ाने के लिये प्रति 10x3x1 फीट लम्बी बैड में 200 ग्राम ट्राइकोडरमा, 200 ग्राम एजोटोबेक्टर, 200 ग्राम पी.एस.बी. व 500 ग्राम नीम की खली को समान रूप से बिखेरकर वर्मी कम्पोस्ट ढेर में मिलायें।

वर्मी कम्पोस्ट को एकत्र करना

लगभग दो माह में गोबर व कार्बनिक अवशेषों को कैंचुऐं व सूक्ष्म जीव वर्मी कम्पोस्ट खाद में बदल देते हैं। तैयार वर्मी कम्पोस्ट दानेदार काले रंग का (चाय की सूखी पत्ती के समान) रूप ले लेता है, जो इसके तैयार होने की पहचान है। तैयार वर्मी कम्पोस्ट को बैड से बाहर निकालकर पोलीथीन

शीट पर ढेर लगा देते है जिससे 2–3 घंटे में केंचुऐ पोलीथीन के फर्श पर नीचे चले जायेंगे। वर्मी कम्पोस्ट खाद को छलना से छानकर अलग करके कैचुओं को पुनः पहले से तैयार अन्य वर्मी कम्पोस्ट बैड में काम में ले लेते है। तैयार वर्मी कम्पोस्ट बैड से वर्मी कम्पोस्ट खाद उतारते रहें। अनुकूल तापमान व नमी की परिस्थितियों में 25–30 दिनों के बाद बेड की ऊंपरी सतह पर 3–4 इंच केंचुआ खाद एकत्रित हो जाती है। इसे अलग करने के लिए बेड की बाहरी सतह को एक तरफ से हटाते है। ऐसा करने पर केंचुऐं बेड की गहराई में चले जाते है। लगभग 5–7 दिन में केंचुऐ खाद 4–6 इंच की एक परत तैयार हो जाती है जिसे भी अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार 40–45 दिन में लगभग 80 प्रतिशत केंचुआ खाद एकत्रित कर ली जाती है। अन्त में कुछ केंचुआ खाद, केंचुऐं, केंचुऐं अण्डे आदि एक छोटे से ढेर के रूप में बच जाते है जिसे पहले से तैयार नई बैड के कचरे में काम में ले लेते है। इस प्रकार लगातार वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन के लिए इस प्रक्रिया को दोहराते है।

वर्मी कम्पोस्ट का फसलों पर प्रयोग

वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग सभी फसलों में किया जा सकता है। 5 टन/है. वर्मीकम्पोस्ट से 50 किलो नत्रजन, 30 किलो फॉस्फोरस एवं 30 किलो पोटाश प्राप्त होता है।

तालिका : 3 वर्मी कम्पोस्ट का विभिन्न फसलों में प्रयोग की मात्रा एवं समय

क्र.सं.	फसलें	आवश्यक मात्रा	प्रयोग समय
1.	खाद्य फसलें	4–5 टन/है.	बुवाई से पूर्व
2.	तिलहनी फसलें	8–12 टन/है.	बुवाई से पूर्व
3.	पुष्प एवं मसाला फसलें	10 टन/है.	बुवाई से पूर्व
4.	सब्जियां	8–10 टन/है.	बुवाई व पौध रोपण से पूर्व
5.	फलदार पौधे	5–10 किग्रा./पौधा	नई फूटान के एक माह पूर्व
6.	नर्सरी (10x13')	20 किग्रा/क्यारी	बीज रोपण से पूर्व
7.	थैलियों में	मिट्टी की एक तिहाई	थैनी भरते समय
8.	गमले वाले पौधें में	200 ग्राम/गमला	पौधा बदलते समय
9.	वृक्षारोपण	5 किलो प्रति पौधा	खड्डा भरते समय
10.	नगदी फसलें	12 टन/ है.	बुआई एवं पौध रोपण पूर्व

3.5 फसल अवशेष अपघटन (वेस्ट डीकम्पोजर)

खेत में फसल अवशेष सुलभता से सड़कर खाद नही बनता जिससे कार्बन नत्रजन अनुपात ठीक नही रहता, फलस्वरूप बीज अंकुरण कम होने के साथ–साथ फसलों में कीट एवं बीमारिया को प्रकोप रहता है। साथ ही कृषि यंत्रों की कार्यक्षमता को कम करता है। परिणामस्वरूप किसान बहुमूल्य फसल अवशेष को कचरा समझ कर जला देता है। फसल अवशेष निस्तारण के लिए राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र, गाजियाबाद द्वारा ''वेस्ट डीकम्पोजर'' लाभकारी सूक्ष्मजीवों से तैयार एक कचरा अपघटक उत्पाद बनाया गया है। जिसके प्रयोग से फसल अवशेषों को शीघ्रता से सड़ाकर खाद तैयार की जा सकती है, इसके अतिरिक्त इसे कई रूपों में प्रयोग किया जा रहा है जैसे – जैव नियंत्रक, जैव उर्वरक, मृदा स्वास्थ्य सुधारक, कचरा अपघटक, शीघ्र कम्पोस्टिंग, जैविक कीट एवं व्याधि नाशक तथा बीज उपचार। इस उत्पाद से कृषक कई अन्य उपयोगी घोल बनाकर जैविक खेती कर रहे है, निसंदेह भविष्य में यह उत्पाद जैविक खेती हेतु वरदान साबित होगा।

घोल बनाने की विधि

प्लास्टिक ड्रम में 200 लीटर पानी लेकर उसमें 2 किलों गुड़ डालकर अच्छे से हिलाकर घोल बनायें। अब बोतल की समस्त सामग्री इस ड्रम में डालकर लकड़ी से अच्छी तरह से हिलायें और पेपर से ढकें। प्रतिदिन 3–4 बार हिलावें। सर्दी के मौसम में 7 दिन तथा गर्मी के दिनों में 3–4 दिन में घोल तैयार हो जाता है।

लाभदायक उपयोग एवं विधि

1 पौध बीमारियों एवं व्याधिकारक के निदान हेतु – उर्पयुक्त घोल का 10 प्रतिशत घोल प्रयोग किया जाता है। एक हैक्टर खेत में 500 लीटर घोल की आवश्यकता होती है।

2 बीज उपचार करने हेतु – बीज पर समान रूप से कचरा अपघटक घोल का छिडकाव कर 30 मिनट के लिए छाया में सुखाकर बुवाई करें। इससे बीज जनित रोगों के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

3 फसल अवशेष की कम्पोस्टिंग हेतु – किसी समतल स्थान पर 1 टन फसल अवशेष (जैविक कचरा) की तह बिछा लें। तैयार घोल में इसे भिगों दें। इसके ऊपर पुनः फसल अपशिष्ट की तह फैला दें। इस पर फिर से तैयार घोल छिडक दें। 7–7 दिनों के अन्तराल में इस समस्त कम्पोस्ट को उल्टते रहें और नमी 70 प्रतिशत तक बनाये रखें। 30–40 दिनों में यह कम्पोस्ट पूरी तरह से तैयार हो जायेगा।

4 खेत में नौलाई व अन्य कचरें का अपघटन कर खाद बनाना।

सावधानियाँ

1 घोल को सीधे शरीर पर न लगने दें, कोई भी रसायन घोल में ना मिलावें।
2 सर्दी के मौसम में 7 दिन तथा गर्मी के मौसम में 3 दिन उपरान्त ही प्रयोग करें।
3 प्रयोग करने के लिये 100 लीटर घोल को ही ड्रम से निकाले तथा 1 किलों गुड़ डालकर पुनः 200 लीटर का आयतन पूर्ण कर देवें।
4 घोल को दिन में 5–7 बार हिलायें, इसके लिये कूलर की मोटर में पाईप लगाकर नीचे का घोल ऊपर छोडें अथवा डंडे से हिलायें।
5 घोल में रासायनिक फफूंदनाशी, शाकनाशी, कीटनाशी इत्यादि को नही मिलावें।

3.6 हरी खाद

हरे पौधों को उनके वानस्पतिक वृद्धि काल में उपयुक्त समय पर जुताई करके मृदा में दबा देना तथा इस हरे पदार्थ द्वारा सड़ने के बाद भूमि को पोषक तत्व प्रदान करने को ''हरी खाद'' या ग्रीन मेन्यूरिंग कहते है।

1 हरी खाद के लिए उपयुक्त फसले वह होती है जिनकी वृद्धि तीव्र गति से हो, शुष्क पदार्थ संग्रहण अधिक हो एवं कम अवधि में पुष्पन अवस्था में पहुँचे।
2 फसल बड़ी होने पर फूल आने से पहले ही उन्हे जोतकर मिट्टी में दबा दिया जाता है। यह फसले मिट्टी में जीवाणुओं द्वारा विच्छेदित होकर ह्यूमस तथा पौधों के पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि करती है।

हरी खाद देने की विधियाँ

हरी खाद देने के मुख्यतया दो तरीके है जो कि उस क्षेत्र की मृदा, जलवायु व पानी की उपलब्धता पर निर्भर करती है।

1 हरी खाद की स्थानिक विधि (इन सिटू ग्रीन मेन्यूरिंग)

खेत में हरी खाद वाली फसल उगाकर उचित बढ़वार अवस्था जैसे पुष्पावस्था पर मिट्टी में दबाया जाता है। इस विधि में हरी खाद की फसल को उसी खेत में उगाया जाता है जिसमें हरी खाद देनी होती है। फसल को उचित समय पर खेत में जोत देते है। इस विधि में सनई, ढैंचा, ग्वार, उड़द, मूंग, लोबिया, बरसीम, लूसर्न, सैंजी आदि फसलों को उगाया जाता है।

2 हरी पत्तियों की खाद (ग्रीन लीफ मेन्यूरिंग)

इसको हरी खाद की हरी पर्ण विधि भी कहते है। इस विधि में विशेष कारण वश जब हरी खाद की फसल को उसी खेत में नही उगाया जा सकता है तो उसे अन्य खेत में उगाकर उचित समय पर काटकर वांछित खेत में बिखेर कर मिट्टी पलटने वाले हल से मिला दिया जाता है, अन्यथा पेड़ों व झाड़ियों की हरी पत्तियों व कोमल शाखाओं को तोड़कर खेत में फैलाकर जोतकर मृदा में दबाया जाता है। इस विधि को उन क्षेत्रों में अपनाया जाता है, जहाँ वार्षिक वर्षा कम होती है। इसके लिए दलहनी एवं अदलहनी दोनो प्रकार की फसलों जैसे नीम, सुबबूल, करंज, अमलताश, सेसबेनिया, सफेद आक, महुवा आदि प्रयोग में ली जाती है।

***

''अभिनव कृषि'' अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

अंक	प्रकाशन माह	विषय–विशेषांक
1	**जून**	खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार, प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण
2	**सितम्बर**	रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, फसल विविधीकरण
3	**दिसम्बर**	सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खीपालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
4	**मार्च**	जायद खेती, उन्नत कृषि उपकरण, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फ्रूट, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण

चने में समन्वित कीट प्रबन्धन

सुरेश कुमार जाट एवं लाधू राम
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

दलहनी फसलों में चने का प्रमुख स्थान है। यह रबी की मुख्य फसल है, कुल दलहनी फसलों के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रफल का लगभग 27 प्रतिशत क्षेत्र चने की खेती के अन्तर्गत आता है तथा कुल दलहनी फसलों के उत्पादन का लगभग 33 प्रतिशत चने का होता है। इसे साथ–साथ चने की फसल में कीड़ों का अधिक प्रकोप होने के कारण भी इसकी खेती में निरन्तर कमी आती जा रही है। चने की फसल में दुनिया भर में लगभग 60 कीट आक्रमण करते पाये गये है। मुख्य रूप से कीटों में फलीभेदक, कर्तनकीट, चैंपा या एफिड, दीमक व सेमीलूपर बहुत नुकसान पहुंचाते है। इन समस्याओं के निवारण के लिए चने की फसल में एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन अपनाकर अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। जिससे रसायनों के प्रयोग को कम करके वातावरण को दूषित होने से बचाया जा सकता है।

समन्वित कीट प्रबन्धन की आवश्यकता

चने में अधिक से अधिक उपज प्राप्त करने के लिये व हानिकारक कीटों से बचाने हेतु किसानों द्वारा कीटनाशी रसायनों के अधिक तथा अनुचित प्रयोग के फलस्वरूप हमें कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनमें पर्यावरण प्रदुषण, मनुष्य एवं जीव जन्तुओं पर हुए प्रभाव एवं हानिकारक कीटों में कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास प्रमुख है। परजीवी तथा परभक्षी कीटों की संख्या में न केवल निरन्तर कमी हो रही है ओंर कीटनाशकों के अवशेषों की मात्रा निरन्तर बढ़ रही है। उक्त परिणामों को देखते हुए अब यह आवश्यक हो गया है कि कीटनाशी रसायनों का कम से कम उपयोग किया जाये एवं कीटों की रोकथाम के लिये अन्य उपायों जैसे कृषि क्रियायें, यांत्रिक उपायों, जैविक कारकों आदि के प्रयोग का जहां तक सम्भव हो सके अधिक से अधिक अपनाया जावे। समन्वित नाशीजीव प्रबन्धन फसल उत्पादन एवं फसल सुरक्षा का मिला जुला तन्त्र है, जिसमें सावधानी पूर्वक हानिकारक नाशीजीवों की निगरानी एवं उनके प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण की प्रक्रियाओं पर ध्यान दिया जाता है। अन्तिम उपाय के रूप में ही कीटनाशी रसायनों का उपयोग किया जाता है।

मुख्य कीट

1 फल भेदक कीट

इस कीट का वयस्क मध्यम आकार का पीले–भूरे रंग का होता है। अगले पंखों पर भूरे रंग की कई धारियां होती है तथा इन पर सेम के आकार के भिन्न–भिन्न काले धब्बे पाये जाते है। जबकि निचले पंखों का रंग सफेद होता है। इस कीट की मादा पत्तियों की निचली सतह पर हल्के पीलें रंग के खरबूजे की तरह धारियों वाले अण्डे देती है। एक मादा अपने जीवन काल में लगभग 500–1000 तक अण्डे देती है। ये अण्डे 3 से 10 दिनों के अन्दर फूट जाते है और इनसे चमकीले हरे रंग की सूंडियां निकलती है। प्रारम्भिक अवस्था में सूंडी मुख्यतः चने की पत्तियों, कलियों तथा फूलों को खाती है बाद में सूंडी विकसित हो रही चने की फली के अंदर घुसकर खाती हुई दानों को खा जाती है तथा फली खोखली होने पर पीली पड़ कर सूख जाती है। जिससे पैदावार पर सीधा प्रभाव पड़ता है। खाते समय इसकी सूंडी का पीछे का भाग फली के बाहर रहता है या प्रारम्भ में पूरी सूंडी फली के अंदर घुस जाती है।

2 कर्तनकीट

इनका प्रभाव देश के प्रत्येक भाग में होता है। कीट चने के अलावा सोलेनियसी परिवार के पौधों तथा कपास एवं दलहनी फसलों पर भी आक्रमण करता है। यह रात के वातावरण में निकलकर नर व मादा संभोग करके पत्तियों पर अण्डे देते है। इनकी जीवन चक्र क्रिया वातावरण के हिसाब से एक–दो महीने में पूरी होती है। इसकी सूंडी जमीन में चने के पौधों के पास मिलती है तथा जमीन की सतह से पौधे तथा इसकी शाखाओं को 30–35 दिन की अवधि तक काटता है।

3 सेमीलूपर

इस कीट की सूंडिया हरे रंग की होती है जो पीठ को ऊपर उठाकर अर्थात अर्धलूप बनाती हुई चलती है इसलिये इसे सेमीलूपर कहा जाता है। यह पत्तियों को कुतर कर खाती है। एक मादा अपने जीवन काल में 400–500 तक अण्डे देती है। अण्डों से 6–7 दिन में सूंडियां निकलती है जो 30–40 दिन तक सक्रिय रहकर पूर्ण विकसित हो जाती है। पूर्ण विकसित सूंडिया पत्तियों को लपेटकर उन्ही के अन्दर प्यूपा बनाती है। जिनसे एक दो सप्ताह बाद सुनहरे रंग का पतंगा बाहर निकलता है।

4 दीमक : दीमक फसलों को हानि पहुंचाने वाले सामान्य कीट की श्रेणी में आती है। सामान्यतः यह मुख्य हानिकारक कीट के अन्तर्गत नहीं आता लेकिन बारानी अवस्थाओं में इसका प्रकोप अधिक देखा गया है। दीमक मुख्यतः मृतजीवी पादप पदार्थो पर ही अपना जीवनयापन करती है। लेकिन भोज्य पदार्थ की कमी होने के समय में सजीव पौधों की जड़ों से अपना भोजन लेना आरम्भ कर देती है। श्रमिक दीमक सजीव पौधों से ही अपना भोजन ग्रहण करती है। ये पौधों के तनों के सहारे सुरंग बनाकर पौधों की जड़ों तक पहुंचकर उन्हें हानि पहुंचाते है जिस कारण पौधे मुरझाना शुरू हो जाते है और अन्त में सूख जाते है। दीमक से प्रभावित पौधा आसानी से हाथों से खींचने से उखड़ जाता है। सूखा पड़ने की स्थिति में दीमक का प्रकोप खड़ी फसल में अधिक देखा गया है।

समन्वित नाशीजीव प्रबन्धन के प्रमुख घटक

शस्य क्रियाओं द्वारा नियंत्रण

बुवाई का समय : असिंचित क्षेत्रों में अक्टूबर के अंतिम सप्ताह तक एवं सिचिंत क्षेत्र में कम अवधि वाली किस्म को 25 नवम्बर तक बो देना चाहिए। अगेती बुवाई कर देने से चने में फली के छिलके कठोर हो जाते है,जिससे फली बेधक कीट की सुण्डियां अंदर नहीं घुस पाती है एवं चना कीट नुकसान से बच जाता है। चने में प्रति हैक्टर पौधों की संख्या ज्यादा होने पर कीटों का आक्रमण ज्यादा होता है अतः चने की बुवाई 30 x 10 से.मी. या 45 x 10 से.मी. में करनी चाहिए जिससे कीट आक्रमण कम होगा व उपज ज्यादा होगी।

अन्तराशस्य फसलें

चने की फसल में अलसी, सरसों, गेंहूं, ज्वार व धनियां को अन्तराशस्य फसल के रूप में बोने से फलीबेधक कीट का नुकसान कम होता है। गेंहू के साथ बुवाई करने के लिए 2 : 2 व सरसों के साथ 4 : 2 के अनुपात में चना अन्तराशस्य के रूप में अपनाया जा सकता है।

खरपतवार नियन्त्रण

प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकला है कि चना फलीबेधक कीट की मादा बथुआ के पेड़ों पर चने की अपेक्षा अधिक अण्डे देती है। अतः चने के फूल निकलने के पूर्व बथुआ को खेत से नहीं निकालना चाहिए। अण्डे देने की अवस्था खत्म होते ही बथुआ के पौधों को निकालकर नष्ट कर दें।

तालिका : चने की फसल में कुछ कीटों आर्थिक नुकसान स्तर

कीट	आर्थिक नुकसान स्तर
फली बेधक	1. दस अण्डे प्रति मीटर पंक्ति पौधे 2. एक सुण्डी प्रति 5 पौधे– फूल आने की अवस्था में 3. एक सुण्डी प्रति मी. पौधे फली आने की अवस्था में 4. 6 से 7 नर कीट प्रति फेरोमोन ट्रैप
कटूबा	5 प्रतिशत पौधों का नुकसान प्रति मीटर पंक्ति पौधे
माहू	11 से 25 माहू प्रति पुष्प चक्र
पर्ण सुरंगक	5 से 10 प्रभावित पत्तियां प्रति पौधा
सैनिक कीट	2 सुण्डी प्रति पौधा

सिंचाई

चने की फसल में अधिक सिंचाई करने से कीट प्रकोप ज्यादा होता है क्योंकि इससे चने में पाये जाने वाला मैलिक अम्ल कम हो जाता है। अतः ज्यादा सिंचाई नहीं करनी चाहिए।

उर्वरक

अधिक नत्रजन युक्त उर्वरक देने से चने की फसल में वृद्धि ज्यादा होती है जिससे कीट जातियों द्वारा नुकसान ज्यादा होता है जबकि पोटाश की वजह से सभी कीटों का नुकसान कम हो जाता है।

यांत्रिक नियन्त्रण

मादा चना फलीबेधक कीट पौधे की ऊपरी पत्तियों पर एक–एक (अलग–अलग) अण्डे देती है। अतः चने को फूल निकलने की पूर्व की अवस्था तक तोड़ने से अण्डे एवं छोटी लटों को नष्ट या कम किया जा सकता है।

प्रकाश–पाश से कीट नियन्त्रण

हरीलट के वयस्क प्रकाश की तरफ आकर्षित होते हैं। रात्रि में लाईट ट्रेप लगाकर इनका नियन्त्रण कर सकते है। किसान खेत में बल्ब या लालटेन रात्रि में जलाकर उसके नीचे पानी की परात भरकर रख दें एवं उसमें थोड़ा मिट्टी का तेल डाल दें। कीड़े बल्ब से टकराकर परात में गिर कर मर जायेंगे।

फेरोमोन ट्रैप

चने की लट, आदि कीटों के नर इस विधि से नष्ट किये जा सकते है। प्रकृति में नर व मादा कीट एक–दूसरें को आकर्षित करने हेतु विरोध गंध छोड़ते है, जिसके सहारे वे एक दूसरें के पास पहुंच जाते है। वैज्ञानिकों ने कीटों की इस गंध को पहचान कर कैप्सूल तैयार किये है। इन्हें कीपनुपा यंत्र के ऊपर लगा देते है। कीप के नीचे थैली बंधी होती है। नर कीट गंध की तरफ आकर्षित होकर कैप्सूल (ल्यूर) से टकराते है व कीप में गिरकर थैली में फंस जाते है। नर व मादा कीटों का मिलन न होने के कारण अगली पीढ़ी जन्म नहीं ले पाती है। इन्हें खेत में लकड़ी के साथ फसल से एक फुट ऊपर लगाते है। प्रति हैक्टर 10 फेरोमोन ट्रैप काम में लिये जाते है।

जैविक नियंत्रण

विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक शत्रुओं से फलीबेधक कीट प्रभावित होता है जिनका प्रयोग समन्वित कीट द्वारा सफलतापूर्वक किया जा सकता है। जैसे –

कैम्पोलटिस क्लोरिडी

यह कीट प्रकृति में नवम्बर से फरवरी तक पाया जाता है जबकि इस समय फली बेधक सुसुप्त अवस्था में होता है। इस दौरान प्रभावित फलीबेधक सुण्डिया 85 प्रतिशत तक मर जाती है। कैम्पोलेटिस की मादा कीट फलीबेधक कीट के प्रथम व द्वितीय अवस्था की सुण्डी के अंदर अण्डे देती है जो विकास की अन्य सीढ़िया लट के अंदर ही पार करती है और विकास पूरा करके लट के शरीर से बाहर आ जाती है जिससे चने की सुण्डियां मर जाती है।

परभक्षी चिड़ियां

फलीबेधक नियन्त्रण में चिड़ियों की एक महत्वपूर्ण हिस्सेदारी है। खासकर मायना व ड्रोंगो चिड़ियां। अतः 200 लकड़ी के टी आकृति के 3.5–4 फीट ऊचाई के टुकड़े प्रति हैक्टर के हिसाब से खेत में गाड़ देने से चिड़ियों के बैठने की व्यवस्था हो जाती है जिससे कीट नियंत्रण में बढ़ोतरी होगी। अतः समय व ऊर्जा को बचाने के लिए लकड़ी के टुकड़े गाड़ना लाभप्रद है।

एन.पी.वी. का छिड़काव

हरी सुण्डी/लट के नियन्त्रण हेतु 250 एल.ई., एन.पी.वी. का पानी में घोल बनाकर एक हैक्टर में फसल की पत्तियों पर छिड़काव करें। एन.पी.वी. में लटों को बीमार करने वाले वायरस पाये जाते है। लटें इनसे संक्रमित होकर तीन–चार दिनों में मर जाती है व मरकर उल्टी लटकी हुई लटों को चुनकर पीसकर, पुनः छिड़काव किया जा सकता है।

अजेडीरेक्टीन

नीम आधारित अजेडीरेक्टीनयुक्त कीट–प्रतिकारक, खाद्य प्रतिबंधक और कीट–वृद्धि रोधक कीटनाशक है जो कि चूषक एवं चबाने वाले कीटों की असरदार रोकथाम करता है। यह कीटों के विकास की विभिन्न अवस्थाओं पर असरात्मक एवं एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन कार्यक्रम हेतु एक आदर्श जैविक कीटनाशक है। इसके 0.15 प्रतिशत घोल की एक लीटर मात्रा प्रति हैक्टर छिड़काव हेतु प्रयोग की जाती है।

बीवेरिया बेसियाना

यह एक प्रकार की फफूंद है जो अनेक प्रकार के कीटों को जैसे माइनर, इल्ली, घुन, मिलीबग, दीमक, रस चूसक कीट, वर्मी वर्म, सफेद मक्खी, माहू आदि में रोग फैलाकर मारता है। इसकी 2.5–3.0 किग्रा. मात्रा का प्रति हैक्टर छिड़काव करें तथा दीमक के नियंत्रण के लिए ताजे गोबर में मिलाकर खेत में रखना चाहिए।

बी.टी. का छिड़काव

यह एक प्रकार का जीवाणु है, इसका पूरा नाम ''बेसिलस थ्युरीजियेन्सिस'' है इसकी फली–छेदक नियन्त्रण हेतु 750 मिली. से 1 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर की दर से फसल पर छिड़काव करें।

रासायनिक नियंत्रण

जब अन्य विधियों द्वारा कीटों के नियंत्रण में सफलता नहीं मिलती है तथा कीटों की संख्या आर्थिक हानि स्तर से ऊपर पहुंच जाती है तो अंतिम हथियार के रूप दवाओं का उपयोग करना चाहिए। इनके उपयोग में ध्यान रखने योग्य बात यह है कि उन्ही रसायनों का उपयोग सही मात्रा में सही समय पर करना चाहिए जिनके उपयोग की सिफारिश कृषि विभाग एवं कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशंसित किये गये है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रथम छिड़काव में कम जहरीली दवाओं का उपयोग करना चाहिए, आवश्यकतानुसार धीरे–धीरे अधिक जहरीली दवाओं का उपयोग सही मात्रा में करना चाहिए। फूल आने से पहले तथा फली लगने के बाद मेलाथियान 5 प्रतिशत या मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत या क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण को 25 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर भुरकें। जब फसल पर 90 प्रतिशत फूल आ जायें जो आवश्यकतानुसार एक भुरकाव और करें। पानी की उपलब्धता वालें स्थानों पर फूल आने के समय इमामेक्टिव बेंजोएट 200 ग्राम/हे. मात्रा का 500 लीटर पानी प्रति हैक्टर के हिसाब से छिड़काव करें।

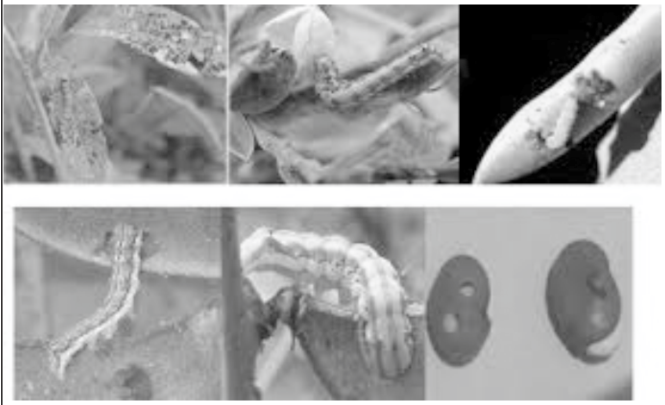

✵✵✵

फसल उत्पादन के लिये जल संग्रहण/प्रबन्धन की प्रभावी रणनीतियाँ

सोमदत्त, पी एस शेखावत, दीपेन्द्र शेखावत एवं सरिता
स्वामी केशवानन्द कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

जल एक प्रमुख प्राकृतिक संसाधन है और जीवन के अस्तित्व का मूल आधार भी है, इसलिए इसकी उपलब्धता बहुत ही आवश्यक है। पिछले कुछ में लगातार बढ़ते शहरीकरण और औद्योगिकरण के कारण कृषि क्षेत्र के लिए जल की उपलब्धता कम होती जा रही है। इसके अलावा, दुनिया भर में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव देखा जा रहा है। प्रदेश में तापमान में बढ़ोतरी, वर्षा में कमी, बाहरमासी नदियों का सूखना एवं सूखा इत्यादि जैसी समस्याओं का अनुभव किया जा रहा है। वर्षा का वितरण अधिक अप्रत्याशित होने के कारण जल आपूर्ति में दीर्घकालिक कमी होने की सम्भावना बढ़ती जा रही है जो कृषि एवं दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से घातक सिद्ध हो सकती है। बढ़ते जल संकट कृषि के लिये गंभीर चुनौती है तथा जल बर्बाद होने के कारण किसानों को बड़ा नुकसान हो रहा है, उनकी उत्पादन लागत बढ़ रही है और सूखा–प्रवण क्षेत्रों में भारी गरीबी का सामना करना पड़ रहा है। कृषि उत्पादन के मामले में भारत विश्व में दूसरे नंबर पर आता है और देश के जीडीपी में कृषि का योगदान लगभग 17 प्रतिशत है। फिर भी अधिकांश राज्यों में सिचाई की व्यवस्था सदियों पुरानी है। हम मानसून पर जरूरत से ज्यादा निर्भर हैं और वर्षाजल संरक्षण के प्रयास बहुत कम हैं। सिचाई की अवसंरचना में नलिका नेटवर्क, भूमिगत जल, कुंए, टैंक और कृषि गतिविधियों के लिये वर्षा जल संचय एवं अन्य उत्पाद शामिल हैं। विगत वर्षों में इनका विस्तार हुआ है, लेकिन यह पर्याप्त नही है। भारत में विश्व के मात्र 4 प्रतिशत जल संसाधन की उपलब्धता है जबकि वैश्विक आबादी का 16 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा यही बसता है। ऐसे में जल संरक्षण और इसके दक्ष उपयोग के महत्त्व को भलीभाँति समझा जा सकता है। जल संरक्षण मोटे तौर पर तीन तरीकों से सम्भव है– वर्षाजल संरक्षण, नहरी जल संरक्षण और भूजल संरक्षण।

(1) **वर्षाजल संरक्षण:** इसमें खेती योग्य क्षेत्र में संचित वर्षाजल के अन्तःसरण में सुधार द्वारा मृदा में जल संरक्षण को बढ़ाया जाता है। इस प्रक्रिया में 100 से.मी. चौड़ी क्यारियाँ, 50 से.मी. गहरे कुंड/कंटूर के साथ बनाई जाती हैं। अमूमन जहाँ 5 प्रतिशत की मृदा ढलान एवं वर्षा 350–750 मि.मी. होती है, उस जगह को इसके लिये चुना जाता है। कुंड के दोनों तरफ फसलों को लगाया जाता है। इसी तरह से कंटूर ट्रेंचिग पद्धति के माध्यम से खाइयों को कृत्रिम रूप से फसल क्षेत्र में कंटूर पंक्तियों के साथ तैयार किया जाता है। यदि वर्षाजल पहाड़ी के नीचे की ओर बह रहा है तो इन खाइयों द्वारा जल को संग्रहित किया जा सकता है। बाद में यह जल मृदा की ऊपरी सतही परतों में फसल विकास एवं उपज वृद्धि के लिये अन्तःसरित हो जाता है। इसी तरह से सीढ़ीदार खेत एवं कंटूर मेड़बन्दी पद्धति के अन्तर्गत पहाड़ी ढलान को कई छोटे–छोटे ढलानों में बाँटते हैं और जल–प्रवाह को रोककर मृदा में जल अवशोषण को बढ़ा दिया जाता है। सूक्ष्म जलग्रहण तकनीक के जरिए बारानी क्षेत्रों से वर्षाजल को संग्रहित किया जाता है, ताकि उस क्षेत्र की मृदा में सुधार हो सके। इसके तहत मुख्यतः पेड़ों या वृक्षों को उगाया जाता है। एक्स–सीटू जल संरक्षण तकनीकों में वर्षाजल अपवाह को फसल क्षेत्र से बाहर संरक्षित किया जाता है। इसके लिये खेत तालाब, चेक डैम आदि का निर्माण किया जाता है।

(2) **नहरी जल संरक्षण:** नहरी सिचाई का कुल सिचाई में लगभग 29 प्रतिशत योगदान है। कुछ नहरें वर्ष भर सिचाई जल उपलब्ध करवाती हैं जिससे जब भी फसलों को सिचाई जल की जरूरत हो, तुरन्त उपलब्ध करवाया जा सकता है। इस तरह से सूखे की स्थिति से फसलों का बचाव किया जा सकता है। कही–कही पर नहरों के जल को संरक्षित रखने के लिये सहायक जल संचयन संरचनाओं का निर्माण भी किया जाता है।

(3) **भूजल संरक्षण:** भूजल हमारे देश में सिचाई, घरेलू एवं औद्योगिक क्षेत्रों की जल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये बहुत ही महत्त्वपूर्ण संसाधन है। भूजल की 91 प्रतिशत खपत कृषि कार्यों में तथा शेष 9 प्रतिशत घरेलू और औद्योगिक उपयोग में होती है। भूजल की प्राकृतिक आपूर्ति बढ़ने के लिये भू:भरण अत्यन्त आवश्यक है। यह प्राकृतिक अथवा कृत्रिम तौर पर भी हो सकता है। प्राकृतिक पुनःजल आपूर्ति एक अत्यन्त ही धीमी प्रक्रिया है, इसलिये कृत्रिम पुनःभरण को भी प्रभावी ढंग से इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत जल विस्तार, गड्ढों एवं कुओं से पुनःभरण एवं सतही जल निकायों से पम्पिग आदि का सहारा लिया जा सकता है।

फसल उत्पादन एवं नमी संरक्षण की महत्वपूर्ण तकनीक

छायावरण/पलवार तकनीक: छायावरण वह प्रक्रिया है जिसमें मिट्टी की सतह को किसी भी प्रकार की प्राकृतिक एवं कृत्रिम सामग्री (जैसे घास, फसल अवशेष, पत्ते, प्लास्टिक चादर इत्यादि) से ढक कर शुष्क क्षेत्रों में यथास्थान मृदा नमी का संरक्षण किया जाता है। छायावरण के प्रयोग से वाष्पीकरण कम होने से नमी संरक्षण बढ़ जाता है और वर्षा जल की अधिकतम मात्रा का भूमि में समावेश होता है। छायावरण द्वारा 25-50% सिचाई योग्य जल की बचत होती है। खरीफ फसल कटने के बाद यदि किसान भूमि खाली रखता है तो अवरोपित नमी की हानि होती है। छायावरण डालने से खेत में नमी बनी रहती है जो रबी फसल के लिए उपयोगी होती है। जनवरी तथा फरवरी महीनों में कम तापक्रम के कारण अधिकांशतया फल पौधे सुसुप्तावस्था में ही रहते हैं और वाष्पीकरण क्रिया भी कम होती है। छायावरण प्रयोग से कम या अधिक तापक्रम का प्रतिकूल प्रभाव भी बहुत कम होता है। बहुत सी फसलों को उनके विकास

के आरंभिक चरण में शीतकालीन वर्षा के कारण कम सिचाई की आवश्यकता होती है जबकि सब्जियों की फसल उगाने के लिए निरंतर उचित नमी की आवश्यकता होती है। शुष्क प्रदेशों के खेतों से 60 से 70 प्रतिशत आर्द्रता एवं वर्षा जल वाष्पीकरण के कारण समाप्त हो जाता है। वाष्पीकरण प्रक्रिया को मलचिग के द्वारा बहुत हद तक कम किया जा सकता है। इस प्रकार मलचिग से मृदा को संरक्षण मिलता है तथा मिट्टी में नमी भी बनी रहती है। अतः छायावरण तकनीक फलों तथा सब्जियों की पैदावार के लिए बहुत लाभकारी है। शुष्क खेती को प्रभावशाली बनाने, खरपतवारों से रक्षा, अच्छी तरह से बीज अंकुरण एवं विकास, भूमि को कठोर होने से बचाने, पर्याप्त मात्रा में नमी संरक्षण, उपज बढ़ाने, पौधों की उचित वृद्धि, अनुकूल वातावरण प्रदान करना, पानी की बचत, उत्पाद गुणवत्ता में सुधार एवं मृदा के तापमान को नियंत्रित करने हेतु मल्चिग का उपयोग करते है।

गोबर एवं हरी खाद, फसल अवशेषों का उपयोग

ये खादें मिट्टी की जल धारण क्षमता को बढ़ाते हुई जड़ क्षेत्र से बाहर जाने वाले जल को कम करती है। हरी खाद की फसलें (ढैंचा, सनई, जुट आदि) जिन्हें अपरिपक्व अवस्था में परिवर्तित जुताई द्वारा मिट्टी में दबाया जाता है जो पुनः अपघटित होकर मिट्टी को ह्यूम्स प्रदान करती है, उसे हरी खाद कहते हैं। ये फसलें प्रायः उस समय उगाई जाती हैं जब मुख्य फसलों को उगाने का समय नही होता है। हरी खाद मिट्टी को बड़ी मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करती है जो मृदा की उर्वरता एवं मृदा संरचना को उन्नत करके अधिक जल संरक्षण करती है। मिट्टी को स्वस्थ तथा उसकी पैदावार बनाए रखने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि मिट्टी की सतह पर फसल अवशेषों का पर्याप्त आवरण हो। मृदा में फसल अवशेष का स्थायी आवरण होने के कारण उसमें उपस्थित सूक्ष्म जीवों की जैविक गतिविधियां बढ़ जाती हैं जिससे मृदा में कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप फसल को समुचित मात्रा में पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। कार्बनिक पदार्थ का मृदा के भौतिक गुणों जैसेः मृदा संरचना, जल धारण क्षमता, मृदा भार घनत्व, उर्वरक उपयोग क्षमता, मृदा समुच्चय, मृदा पारगम्यता दर, पोषक तत्व प्रतिधारण को फसल के जड़ीय क्षेत्र में बढ़ाने में मुख्य भूमिका है। खेती में किसान का मित्र कहे जाने वाले केंचुए की संख्या में वृद्धि होती है। फसलों की जड़ों एवं केंचुए द्वारा बनाये हुये छिद्रों में पानी एवं हवा का अनुपात (1:1) बना रहता है जिससे फसलों की वृद्धि एवं विकास ठीक ढंग से होता है।

परिरेखा बाँध, परिरेखा खाई

लम्बे समय तक मृदा नमी संरक्षण के लिए परिरेखा बाँध बहुत ही प्रभावकारी होते हैं। यह कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होते हैं जहाँ मानसून का अप्रवाहित जल समान ऊंचाई वाले कन्टूर के चारों तरफ ढलान वाली भूमि पर बाँध बनाकर रोका जा सकता है। परिरेखा बाँध कम ढलान वाली जमीन के लिए उपयुक्त होते हैं और इनमें सीढ़ीयां बनाया जाना शामिल नही होता। बढ़ते हुए जल बहाव को प्राप्त करने से पहले बाँध के बीच में उचित दूरी रखकर प्रवाह गति को कम कर दिया जाता है। विभिन्न कृषि सम्बन्धी गतिविधियाँ कन्टूर रेखा पर या कन्टूर रेखा के आसपास पूर्ण की जाती है। फलदार पौधों को समोच्च खाइयों में लगाना उपयुक्त होता है।

समतलीकरण व मेड़ बनाना

भूमि के समतल न होने के कारण वर्षा जल का अत्यधिक भाग प्रवाहित हो जाता है जो मृदा एवं पोषक तत्वों का ह्रास करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए कृषि योग्य भूमि के प्रत्येक खेत को समतल करने व मेड़ बनाने की आवश्यकता होती है ताकि वर्षा जल को अधिक से अधिक रोका जा सके। इन अपक्षय को रोकने व जल संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए उस क्षेत्र को कम से कम कटाव व भरण विधि द्वारा समलत किया जाना लाभप्रद रहता है। अतिरिक्त जल बहाव को नियंत्रित करने के लिए उचित निकासी की व्यवस्था मानसून आने से पूर्व ही क्षेत्र विशेष के चारों ओर बाँध बनाना आवश्यक होता है।

सीढ़ीनुमा खेत

सीढ़ीनुमा खेत का निर्माण 15–33 प्रतिशत ढलान वाले क्षेत्रों में ही कारगर होता है। ढलानदार सतह पर अप्रवाह गति बहुत अधिक होने के कारण सीढ़ीनुमा खेत बनाने की परम्परा है। इन प्रत्येक सीढ़ीनुमा खेतों के ढलान अंदर की ओर रखना चाहिये ताकि जल बहाव को कम करके सतह की उपजाऊ मिट्टी को बहने से रोका जा सके। खेत के किनारों को मजबूत तथा उस पर पानी के दबाव को कम करने के लिए बाहरी किनारों पर घास एवं पौध रोपण काफी सहायक सिद्ध होता है।

हल द्वारा कुंड बनाना

इस विधि में प्रत्येक कुंड प्रवाह अवरोधक का कार्य करने के साथ–साथ वर्षा जल भंडारण का कार्य भी करते हैं। कन्टूर रेखा के साथ–साथ कुंड बनाने से यह और भी अधिक प्रभावशाली बन जाती है।

वर्षा जल फैलाव

इस प्रक्रिया में वर्षा जल प्रवाह की अधिक मात्रा को मोड़कर खेत के किसी भी ओर से भू–सतह पर पहुँचाया जाता है जो मिट्टी में आंतरिक रिसाव को प्रोत्साहित करने के कारण काफी समय तक फसल को नमी प्रदान करता रहता है।

V आकार की खाई

मशीन या हाथ द्वारा कन्टूर रेखा के साथ–साथ 4–6 मीटर के अन्तराल पर वी आकार की खाई बनाई जाती है और इस खाई की बिल्कुल नीचे एक छोटा मिट्टी का बाँध बनाया जाता है जो पानी को रोके रखता है। इस प्रकार खाई में एकत्रित जल भूमि के अंदर समाहित होकर भूमिगत जल–स्रोत को उन्नत करने में सहायक होता हैं।

खेत में तालाब की तलछट का प्रयोग

बलुई मिट्टी की जल धारण क्षमता बहुत कम होती है इस कारण वर्षा का अधिकांश जल गहरे अन्तः स्त्राव के द्वारा बिना किसी उपयोग के निचे चला जाता है। वर्षाकाल में बहाव के साथ तालाबों में चिकनी मिट्टी जमा हो जाती है जिसकी बलुई मिट्टी की तुलना में जलधारण क्षमता अधिक होती है। इसलिए गर्मियों में तालाब के सूखने पर काली चिकनी मिट्टी खेत में बिच्छा देने से खेत की जल धारण क्षमता बढ़ाई जा सकती है व पानी अधिक समय तक फसलों के लिये उपलब्ध रहेगा ।

जल संग्रह जलाशय

यह एक साधारण प्रक्रिया है जिसमें बारिश के पानी को तालाबों और छोटे जल स्रोतों में जमा किया जाता है। इस तरीके से जमा किए हुए जल को ज्यादातर कृषि के कार्यों में लगाया जाता है। जल संग्रह जलाशय पहाड़ी और रेगिस्तान क्षेत्रों में जल संचयन का प्रभावी तरीका है। जहां ऐसे जलाशयों का निर्माण कर आसानी से बारिश के पानी को इकट्ठा किया जा सकता है। इस तरह से किसान वर्षा जल संग्रहण करके अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।

पट्टीदार शस्यन

पट्टीदार शस्यन मृदा एंव जल सरंक्षण के दृष्टिकोण से मरुक्षेत्र में बहुत उपयोगी है इसमें विभिन्न बढवार व स्वभाव वाली फसलों की निश्चित कतारों की पट्टियाँ एकांतर क्रम में बोयी जाती है तिल की चार कतारों के साथ मोठ की 6 कतारों की पट्टिया एकांतर क्रम में बोने से अधिक लाभ प्राप्त होता है। इसी प्रकार सेवण घास के साथ खरीफ दलहनी फसलों के पट्टीदार शस्यन से वायु द्वारा मृदा क्षरण रोकने के साथ साथ प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

शुष्क क्षेत्रों में फसल उत्पादन के लिये महत्वपूर्ण बिंदु

शुष्क कृषि क्षेत्रों में थोडे समय में तैयार होने वाली फसलों को उगाया जाना चाहिये। जैसे बाजरा, दलहन आदि की खेती उपयुक्त है। शुष्क कृषि क्षेत्रों में गेहूँ के मुकाबले में जौ की फसल अधिक उपयोगी मानी जाती है। शुष्क कृषि के लिये ऐसी फसलों का चयन करना चाहिये जो कम वर्षा होने पर भी अच्छा उत्पादन दे सकें और फसल कम समय में तैयार हो सके। शुष्क कृषि क्षेत्रों में फसलों को जल्दी अथवा पहली वर्षा के साथ बो देने से उत्पादन में वृद्धि होती है। इससे फसलों को वर्षा का पूरा लाभ प्राप्त होता है। मानसून का प्रवेश होते ही खरीफ फसलों की बोआई शुरु कर दें। साथ ही 90 से 105 दिनों में तैयार होने वाली फसलों को ही लगायें। हथिया नक्षत्र शुरु होते ही रबी फसलों का बुआई प्रारम्भ कर दें। खेत में न तो अत्यधिक बीज बोना चाहिये और न ही बहुत कम। इसके साथ ही बीज दर, अन्तराल एवं उर्वरक की मात्रा का भी महत्व कम नही है। फसलों को मिश्रित रूप से उगाने से भी फसलों का उत्पादन बढ़ जाता है। मूंगफली के साथ अरहर, ज्वार के साथ अरहर, ज्वार के साथ उड़द, बाजरे के साथ मूंग मिश्रित फसलें हैं। खरीफ फसलों में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पौटाश को अनुशंसित मात्रा में दें। साथ ही वर्मीकम्पोस्ट व गोबर की खाद का उपयोग करें। इससे खेत की जलधारण क्षमता बढ़ती है। शुष्क भूमि में दलहनी फसलों में राइजोबियम कल्चर का उपयोग करने से नाइट्रोजन पर निरर्भता बहुत हद तक कम हो जाती है। शुष्क क्षेत्रों को गैर–कृषि व्यवसायों जैसे कि पशुपालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, सामाजिक वानिकी और शुष्क क्षेत्रों के विकास के लिए कुटीर उद्योगो के साथ पूरक होना चाहिए।

❋❋❋

सर्दी के मौसम में फसलों को पाले से बचाव के उपाय

हरफूल मीणा, भैरूलाल कुम्हार एवं राकेश कुमार बैरवा
कृषि अनुसंधान केन्द्र उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

पाला

हिमांक से नीचे के तापमान वाला मौसम जिसमें (रात के समय) जमीन पर बर्फ की हलकी परत जम जाती है पाला कहलाता है। तापमान कम होने पर, पौधों के ऊतकों को बनाने वाली कोशिकाओं में पानी को जमा देता है जिससे गर्म जलवायु में विकसित होने वाले पौधों को नुकसान होता है । इस प्रक्रिया से उत्पन्न ऊतक क्षति को ''ठंढ क्षति'' के रूप में जाना जाता है। पाला प्रभावित क्षेत्रों में किसान ठंढ की क्षति से फसलों को बचाव हेतू कई उचित तरीके अपनाते है ।

पाला पडने की संभावना

पाला पड़ने की संभावना आमतौर पर मध्य दिसम्बर से मध्य जनवरी तक रहती है, परंतु वातावरण मे कुछ बदलाव के कारणों से इसकी अवधि पूरे दिसम्बर से जनवरी माह के अन्त तक बढ जाती है।

पाले से होने वाले नुकसान

1 शीतलहर एवं पाले से सर्दी के मौसम में सभी फसलों को नुकसान होने की सम्भावना रहती है। सब्जी वाली फसलों जैसे टमाटर, मिर्च, बैंगन, मटर, चना, अलसी, सरसों, जीरा, धनिया, सौंफ, अफीम एवं पपीता आदि फसलों में 80 से 90 प्रतिशत तक नुकसान होने की सम्भावना रहती है।

2 पौधो व फसलो पर फूल झड़ने लगते, फल गिरने लगते एवं पत्तियों का रंग मिट्टी के जैसा दिखता है, प्रभावित फसल का हरा रंग समाप्त हो जाता है, तथा ऐसे में पौधों के पत्ते सड़ने से बैक्टीरिया जनित बीमारियों का प्रकोप अधिक बढ़ जाता है । पत्ती, फल के ऊपर धब्बे पड़ जाते हैं व स्वाद भी खराब हो जाता है। पाले से प्रभावित फसल, फल व सब्जियों में कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है।

3 फलदार पौधो में इसका प्रभाव अधिक पाया गया है। शीत ऋतु वाले पौधे 2 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान सहने में सक्षम होते है। इससे कम तापमान होने पर पौधे की बाहर व अन्दर की कोशिकाओं में बर्फ जम जाती है। जिससे कोशिका भित्ती फट जाने से पौधे मर जाते है।

पाले से बचाव के उपाय

1 लो टनल एक बहुत ही महत्वपूर्ण तकनिकी है जिससे सब्जियाँ (आलू ,टमाटर, गोभी, मटर, आदि) को पाले से बचाने के लिए काम में लेते हैं इस तकनिकी में अर्दचन्द्राकार सरिये लगा कर उस पर कपड़ा या पॉलीथिन की सीट बीछा कर लगाते हैं इस तकनिकि में किसान बुवाई ट्रेन्च की उत्तर दिशा में सरकन्डे की टाटि बाँधते हैं जिसका झुकाव दक्षिण दिशा में रखा जाता है ताकि उत्तर की तरफ से आने वाली ठ्न्डी हवाओं से फसल को बचाया जा सकें।

2 जिस रात पाला पड़ने की संभावना हो उस रात 12:00 से 2:00 बजे के आस–पास खेत की उत्तरी पश्चिमी दिशा से आने वाली ठंडी हवा की दिशा में खेतों के किनारे पर बोई हुई फसलों के आसपास, मेड़ों पर रात्रि में कूड़ा–कचरा या अन्य व्यर्थ घास–फूस जलाकर धुआं करना चाहिए, जससे वातावरण के तापमान में बढोतरी होने से फसलों को पाले से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है।

3 पौधशाला के पौधों को टाट, पॉलिथीन अथवा भूसे से ढ़क दें। वायुरोधी टाटियों को हवा आने वाली दिशा की तरफ से बांधकर क्यारियों के किनारों पर लगाएं तथा दिन में पुनः हटा दें।

4 पाला पड़ने की संभावना हो तब खेत में सिंचाई करनी चाहिए। नमी युक्त जमीन में काफी देर तक गर्मी रहती है तथा भूमि का तापमान कम नहीं होता है। इस प्रकार पर्याप्त नमी नहीं होने पर शीतलहर व पाले से नुकसान की संभावना कम रहती है। सर्दी में फसल में सिंचाई करने से 0.5 डिग्री से 2 डिग्री सेल्सियस तापमान बढ़ जाता है।

5 पाला पड़ने की संभावना हो उन दिनों फसलों पर गंधक के तेजाब का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए, इस हेतु 1 लीटर गंधक के तेजाब को 1000 लीटर पानी में घोलकर एक हेक्टर क्षेत्र में प्लास्टिक के स्प्रेयर से छिड़काव करें इसका असर 2 सप्ताह तक रहता है। यदि इस अवधि के बाद भी शीत लहर पाले की संभावना बनी रहे तो गंधक के तेजाब के छिड़काव को 15–15 दिन के अंतराल पर दोहराते रहे।

6 सरसों, गेंहूँ, आलू, मटर जैसी फसलों को पाले से बचाने में गंधक के तेजाब का छिड़काव करने से न केवल पाले से बचाव होता है बल्कि पौधों में लौह तत्व एवं रासायनिक सक्रियता बढ़ जाती है,जो पौधों में रोगरोधिता बढ़ाने में एवं फसल को जल्दी पकाने में सहायक होती है।

7 दीर्घकालीन उपाय के रूप में फसलों को बचाने के लिए खेत की उत्तरी–पश्चिमी मेड़ों पर तथा बीच–बीच में उचित स्थानों पर वायु अवरोधक पेड़ जैसे शहतूत, शीशम, बबूल, खेजड़ी एवं जामुन आदि लगा दिए जाए, तो पाले और ठंडी हवा के झोंकों से फसलों को बचाया जा सकता है।

8. ग्रामीण कृषि मौसम सेवा परियोजना से पूर्वानुमान कृषक सलाह बुलेटिन, मेघदूत मोबाइल एप्प एवं किसान पोर्टल के माध्यम से किसानो को मौसम सम्बन्धित जानकारियों के संदेश भेज कर पाले की परिस्थियों में होने वाले नुकसान से बचाव के सुझाव दिये जाते है।

Covid-19 के कारण मुर्गीपालन व्यवसाय में आने वाली चुनौतियां एवं उनका समाधान

बी एस मीणा एवं मोहन लाल जाट
कृषि विज्ञान केन्द्र, करौली (राजस्थान)

कोरोना वायरस के डर के कारण पोल्ट्री फार्म तथा ब्राइलर फार्म को काफी नुकसान हो रहा है। इस वायरस के डर के कारण लोगों ने अंडे तथा मीट से परहेज करना शुरू कर दिया है। सर्दी के मौसम में पोल्ट्री फार्म से अंडा 8 से 10 रुपये के करीब बिकता था लेकिन अब अंडे का दाम 5 रुपये से ज्यादा नही बढ़ा। कोरोना वायरस की वजह से फैलाई जा रही फेक न्यूज के चलते भारत के करीब 50 लाख लोगों की रोजी रोटी का जरिया और देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले पॉल्ट्री प्रोडक्ट पर बुरा असर पड़ा है। इसका परिणाम ये हुआ है कि पॉल्ट्री (मुर्गीपालन) के कारोबार में लगे लोग निराश हो चुके हैं और तनाव में जी रहे हैं। खासकर वो लोग जो मांसाहारी हैं उनका भी इन दिनों पॉल्ट्री प्रोडक्ट से मोहभंग हो गया है साथ ही बाजार में दानों एवं राशन की कीमतों में भारी बढ़ोत्तरी कारण यह लाभ की तुलना में घाटे का सौदा साबित हो रहा है, फिर भी कुछ सावधानियां के साथ इस व्यवसाय को फिर से उबारा जा सकता है । अंडा उत्पादक मुर्गियों का राशन, टीकाकरण एवं अंडा उत्पादन तथा उनके परिवहन में रखी जाने वाली सावधानिया, जिनको अपनाकर किसान अच्छा लाभ कमा सकते हैं ।

चुजों के आहार में 18 प्रतिशत प्रोटीन की आवश्यकता होती है। मुर्गीयों को सांद्रता (कान्स्ट्रेट) आहार के रूप मे मछली का चुरा, सोयाबीन व मुंगफली की खल, विटामिन एवं लवण आदि खिलाने चाहिए।

घर के पिछवाडे मुर्गी पालन में मुर्गीयां अपना 40–50 प्रतिशत आहार आंगन, पिछवाडे तथा आसपास गिरे हुए अन्न के दाने, झाड फूस के बीज, कीडे मवेशियों के चिचड, कोमल घास तथा घर के झुठन के माध्यम से प्राप्त होती है । लेकिन इसके अलावा मुर्गीयों में अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए कुछ अतिरिक्त आहार की जरूरत भी पडती है। आहार के साथ मुर्गीयों को कान्स्ट्रेट आहार भी देना बहुत जरूरी होता है ताकि मुर्गीयों को शारीरिक विकास भी अच्छा हो सके तथा उनके उत्पादन पर भी विपरीत प्रभाव नही पडें। इसके साथ ही मुर्गीयों को यदि दाने के साथ हरा पालक या रिजका काटकर खिलाया जाए तो जर्दी का रंग पिला हो जाता व मुर्गीयों को विटामिन्स व खनिज लवण भी मिल जातें है। किसान विभिन्न उम्र की मुर्गीयों को निम्न प्रकार से सन्तुलित आहार खिला सकता है।

तालिका : 1 विभिन्न उम्र की मुर्गीयों के लिए सन्तुलित आहार

क्र.सं.	सामग्री	चूजे (0–8 सप्ताह)	चूजे (9–20 सप्ताह)	अण्डे देने वाली मुर्गियों (20 सप्ताह से अधिक)
1	चिक कान्स्ट्रेट	35 प्रतिशत	35 प्रतिशत	नहीं
2	पोल्ट्री कान्स्ट्रेट	नहीं	25 प्रतिशत	25 प्रतिशत
3	चावल पालिश	30 प्रतिशत	40 प्रतिशत	40 प्रतिशत
4	मक्का	30 प्रतिशत	30 प्रतिशत	50 प्रतिशत
5	ज्वार, गेहू,बाजरा	50 प्रतिशत	10 प्रतिशत	10 प्रतिशत
6	संगमरमर के टुकडे	3 प्रतिशत	10 प्रतिशत	20 प्रतिशत

मुर्गियों का राशन

समुचित अण्डा व मांस उत्पादन की दृष्टि से जरूरी है कि मुर्गीयो को उनकी आवश्यकतानुसार आहार भी मिलना चाहिए। आहार में प्रोटीन, कार्बोहाइट्रेटस, वसा , खनिज लवण एवं विटामिन आदि सभी तत्व मौजुद होने चाहिए। मुर्गीपालक को दाना बाजार से खरीदने की अपेक्षा स्वयं घर पर ही तैयार करना चाहिए, दानों में उर्जा का मुख्य स्त्रोत मक्का है किन्तु गेंहू,ज्वार आदि भी ऊर्जा के अच्छे स्त्रोत है और थोडी मात्रा में मक्का के साथ मिलाये जा सकते है। सामान्यतः एक उन्नत नस्ल की मुर्गीयों को 100–120 ग्राम दाने की प्रतिदिन जरूरत पडती है। 0–8 सप्ताह तक के चुजों के आहार में 21 प्रतिशत प्रोटीन व 9–20 सप्ताह के बडे

खाना पानी के बर्तन

मुर्गीयों के आहार के लिए अलग– अलग आयु वर्ग के अनुसार अलग – अलग प्रकार के बर्तनों की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार से पीने के पानी के बर्तन भी आयु वर्ग के अनुसार अलग – अलग होनी चाहिए इसके साथ ही दाने व पानी के बर्तन इस प्रकार के होने चाहिए, ताकि उनकी साफ–सफाई ठीक से हो सके। दाने का कम से कम नुकसान हो ओर मुर्गी आरामपूर्वक दाना खा सके तथा पानी पी सकें व पानी में प्रवेश नहीं कर सके। इस हेतु एल्युमिनियम के बर्तन ज्यादा उपयुक्त रहते है।

मुर्गीयों की प्रमुख बीमारियां एवं टीकाकरण

- **पोषण सम्बन्धित रोग :** कुक्कुट आहार में पोषक तत्वो जैसे विटामिन, खनिज लवणो व अन्य तत्वों की कमी से होने वाले रोग इस श्रेणी में आते है जैसे दृरंतोंधी, रिकेट्स , डरमेटाइटिस, एविटामिनोसिस इत्यादि
- **परजीवी रोग :** बाहरी एवं आन्तरिक परजीवी द्वारा होने वाले रोग जैसे जूं, चिचंडी, बगस, पिस्सु द्वारा –खुजली – खराश आदि तथा आंतरिक परजीवी जैसे गोल कृमि ,फीता कृमि द्वारा जैसे – फाइल पोक्स, स्पाइरोफिरोसिस आदि।
- **संक्रामक रोग :** जीवाणु एवं विषाणु से होने वाले रोग जैसे रानी खेत, चेचक, मैरेक्स रोग आदि।
- **प्रोटोजोअन रोग :** काकक्सीडियोसिस, स्पाई रोकिटोसीस, एस्पाराजिलोसिस इत्यादि।
- **कवक रोग :** अफलाटोक्सिकोसिस, एस्परजिलोसिस, ब्रुडर निमोनिया इत्यादि।

मुर्गियों को बीमारियों से बचाने हेतु सावधानियां

- रोगी एवं स्वस्थ मुर्गियों के लिये अलग–अलग व्यक्ति देखरेख करे।
- समय समय पर कुक्कुट शाला में कीटाणु नाशक दवाई का छिडकाव करें।
- रोगी या मरे हुये मुर्गियों या चूजों को गाड़ना।
- रोगी और दुर्लभ चूजों और मुर्गियों को अलग रखना ।
- मुर्गी आवास एवं उसमे प्रयोग होने वाले उपकरण जैसे पानी एवं दाने के बर्तन तथा बिछावन आदि को साफ रखना एवं समय समय पर जीवाणु नाशक दवाई का छिडकाव करना ।
- उचित समय पर रोग निरोधक टीके लगवाने चाहिए।
- समय समय पर दाने और पानी में एंटी बायोटिक दवाई,विटामिन्स एवं खनिज लवण देने चाहिए।
- मुर्गियों को अन्य पक्षी एवं जंगली जानवर आदि से दूर रखना चाहिए।
- अंडा देने वाली मुर्गियों को साल में तीन बार कृमिनाशक दवा पिलानी चाहिए।
- रोग के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत पशु चिकित्सा अधिकारी से सम्पर्क करना चाहिए।

अंडा उत्पादन तथा उनके परिवहन हेतु सावधानियां

- अंडों को इकट्ठा, पैकेजिग, परिवहन और बिक्री करते समय पीपीई किट का उपयोग करें।
- कर्मचारी 1 मीटर की सामाजिक दूरी सलाह के अनुपालन की सुविधा के लिए फर्श के चिह्नों का उपयोग करें।
- सामाजिक दूरी बनाए रखने के लिए कर्मचारियों की संख्या को सीमित करें।
- अंडों के रख रखाव करने वाले किसी व्यक्ति को अक्सर कम से कम 20 सेकंड के लिए अपने हाथों को साबुन और पानी से धोना चाहिए।
- धोने के बाद, अंडों को क्लोरीन आधारित सैनिटाइजर (50-200 ppm) का उपयोग करके साफ करना चाहिए।
- विपणन के लिए परिवहन के दौरान, अंडों को एक बंद कंटेनर में परिवहन करना चाहिए।
- कर्मचारियों या ग्राहकों द्वारा नियमित रूप से छुए जाने वाले वस्तुओं और सतहों को अक्सर साफ और कीटाणुरहित करना चाहिए इसके लिए 1% हाइपोक्लोराइड घोल का उपयोग जा सकता है।

तालिका : 2 अण्डे देने वाली मुर्गियों में टीकाकरण

क्र.सं.	मुर्गी की उम्र	रोग का नाम	टीकाकरण विधि
1	1 दिन	मेरेक्स	त्वचा में
2	7 दिन	रानीखेत	आंख / नासछिद्र में
3	14 दिन	गम्बोरो	पीने के पानी में
4	21–25 दिन	संक्रामक ब्रोकाइटिस	आंख / नासछिद्र में
5	28 दिन	रानीखेत	पीने के पानी में
6	6 सप्ताह	फाउल पॉक्स (चिक एम्ब्रो फाउल पॉक्स वेक्सीन एडोपटिड)	विंग वेब में
7	10 सप्ताह	रानीखेत	त्वचा में
8	12 सप्ताह	गम्बोरो	पीने के पानी में
9	12 और 13 सप्ताह	संक्रामक ब्रोकाइटिस	पीने के पानी में
10	19 सप्ताह	रानीखेत, गम्बोरो, ब्रोकाइटिस संक्रामक	मांस में

उन्नत खेती का नया आयाम: जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग

नाना लाल माली, राहुल चोपड़ा एवं हनुमान सिंह
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

भारत एक कृषि प्रधान देश हैं। यहां आज भी लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। परन्तु आजादी के 72 वर्षों के बाद भी अधिकांश कृषक परिवार गरीबी रेखा से नीचे अपना जीवन यापन करने के लिए विवश है। देश ने प्रगति की लेकिन हमारे किसानों की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। वर्ष 1965–66 में हमारा देश में हरित क्रांति आने के बाद खाद्यान्न उत्पादन में तो आत्मनिर्भर हुआ परन्तु मंहगे बीजों, उर्वरकों, कीटनाशकों और मशीनों के प्रयोग ने किसानों की उत्पादन लागत को बढा दिया। लेकिन किसानों को कभी भी लागत के अनुरूप फसल का मूल्य प्राप्त नहीं हुआ। जिसका विपरित प्रभाव ये पडा कि किसान कर्ज में डुबने लगा और कर्ज ना चुका पाने के कारण आत्महत्या जैसे कदम भी उठाने लगा। यही नहीं हरित क्रांति के बाद अधिक रसायनों के प्रयोग के कारण मृदा उर्वरता कम हो गयी और इसका सीधा असर उत्पादकता पर पडा। मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता को बढाने के लिए कृषि वैज्ञानिकों ने समय–समय पर खेती के तरीकों में बदलाव किया और किसानों के लिए नवीन विधियों का विकास किया। सरकारों द्वारा भी विभिन्न योजनाएं लागू की गई। इसी क्रम में वर्तमान समय में सरकार द्वारा जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग को बड़ावा दिया जा रहा है, ताकि वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दौगुना किया जा सके।

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग का मतलब होता है रासायनिक खाद व कीटनाशकों का प्रयोग ना करते हुए, प्राकृतिक तरीके से खेती करना जिससे की किसी भी तरह की फसल का उत्पादन किया जाये तो उसका लागत मूल्य जीरो यानि शून्य रहे। अब इसका ये मतलब नहीं है कि फसल उत्पादन में कोई खर्च नहीं होगा। खर्चा तो होगा लेकिन बहुत कम। जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग करने के लिए जो भी आवश्यक सामग्री है वो किसान के घर व खेत पर ही उपलब्ध हो जाती है और किसान को कोई अतिरिक्त खर्च नहीं करना पड़ता है इसीलिए इसे जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग यानि बिना खर्च की प्राकृतिक खेती कहते है।

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग, संक्षिप्त परिचय

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग के सूत्रधार महाराष्ट्र राज्य के सुभाष पालेकर है उनके अनुसार बिना किसी रासायनीक खाद व कीटनाशक के प्रयोग के भी बहुत अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग करने के लिए मुख्यतया गाय का गोबर व मूत्र प्रयोग किया जाता है। इसमें ध्यान देने योग्य जो बात है वो ये है की जिस गाय का गोबर व मूत्र प्रयोग किया जाये वो देशी नस्ल की होनी चाहिए। विदेशी नस्ल की गाय का गोबर व मूत्र कारगर नहीं है। गाय के गोबर में असंख्य सूक्ष्म जीव पाये जाते हैं जो भूमि के उपजाऊपन के लिए बहुत लाभदायक होते है। ये सूक्ष्म जीव पौधे को वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्व ग्रहण करने में अहम योगदान देते है। इस प्रकार देखा जाये तो जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग पूर्णतया गाय के गोबर व मूत्र पर आधारित है। पालेकर जी के अनुसार एक गाय के गोबर व मूत्र से कोई भी किसान 30 एकड़ भूमि पर जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग कर सकता है। गाय के गोबर एवं मूत्र का उपयोग कर खेती के लिए उपयोगी उत्पाद जैसे जीवामृत, घनजीवामृत, जामन जीवामृत, अग्निस्त्र, ब्रह्मस्त्र तथा नीमस्त्र बनाये जाते है। जीवामृत, घनजीवामृत तथा जामन जीवामृत के प्रयोग से मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है। जो मृदा में उपस्थित जैविक पदार्थों को खा कर पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करते हैं तथा मृदा उर्वरता को बढाते है। रोगों व कीटों से बचने के लिए अग्निस्त्र, ब्रह्मस्त्र तथा नीमस्त्र का प्रयोग किया जाता है।

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग की विशेषताएँ:

- यह सभी प्रकार रसायनों से मुक्त खेती है, इसमें किसी भी प्रकार के रसायनिक खाद का उपयोग नहीं किया जाता है।
- यह विधि भारत में पुराने समय में की जाने वाली परम्परागत कृषि पर आधारित है जिसमें फसल उत्पादन में आने वाली किसी भी समस्या का समाधान प्राकृतिक तरीके से ही किया जाता था।
- इस विधि से फसल उत्पादन करने के लिए आवश्यक संसाधन हर किसान के घर पर आसानी से उपलब्ध हो जाते है। अतः उसे बाजार से कुछ भी खरीदना नहीं पड़ता है।
- इस विधि का केन्द्र बिन्दु यह है की चाहे किसी भी प्रकार की फसल का उत्पादन किया जाये उसका लागत मूल्य जीरो ही होना चाहिए।
- इस विधि के अन्तर्गत किसान को रसायनिक खाद व कीटनाशक का प्रयोग नहीं करना पड़ता है जिससे धन व समय की बचत होती है।
- इस विधि में किसान को बार–बार गहरी सिंचाई करने की जरूरत नहीं होती है।
- इस विधि के अन्तर्गत खेत में गाय के गोबर, गोमूत्र तथा अन्य जैविक घटको से बने उत्पादनों का उपयोग करने से मृदा के अन्दर उपस्थित लाभदायक जीवो की संख्या में वृद्धि होती है। जिससे मृदा उर्वरता बढ़ जाती है।

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग के घटक:

- **बीजामृत:** इसके द्वारा बोये जाने वाले बीज को उपचारित किया जाता है। इसे बनाने के लिए गाय के गोबर, मूत्र, चूना तथा पानी की आवश्यकता होती है।
- **जीवामृत:** गाय के गोबर, मूत्र, गुड़ तथा अन्य जैविक घटकों को मिलाकर कर एक घोल तैयार करके उसे किण्वन के लिए रखते है। इसे खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है।
- **मल्चिंग:** इसके अन्तर्गत खेत की जुताई ना करके उस खेत में उगाई गई फसल के अवशेषों को भूमि पर ही छोड़ दिया जाता है। जिससे खेत की मृदा पूरी तरह आच्छांदित हो जाये।
- **वाफसा:** इसके अन्तर्गत खेत में सिंचाई ना करके उसके स्थान पर मृदा में उपस्थित नमी तथा वायु के उपयोग को ज्यादा महत्त्व दिया जाता है।
- **अग्निस्त्र, ब्रह्मस्त्र तथा नीमस्त्र:** इन सबका उपयोग फसल को कीटों से बचाने के लिए किया जाता है। इन के प्रयोग से फसल को नुकसान पहुँचाने वाले सभी प्रकार के कीट नष्ट हो जाते है।

मल्चिंग और वाफसा क्या है?

मल्चिंग : इसके तहत हम विभिन्न प्रकार के पदार्थो जैसे फसलों के अवशेष, पेड़–पौधों की पतियां आदि का उपयोग करके भूमि को आच्छांदित कर देते है जिससे मृदा में उपस्थित जल का वाष्पीकरण कम से कम हो तथा मृदा के अन्दर नमी बनी रहे। मल्चिंग के प्रभाव से मृदा कटाव में भी कमी आती है जिससे उपजाऊ मृदा बिना नष्ट हुए खेत में लम्बे समय तक बनी रहती है।

वाफसा : वाफसा का मतलब होता है– वायु और वाष्प का मिश्रण। मृदा के दो कणों के बीच में खाली जगह होती है। इस खाली जगह में हवा और जल उपस्थित रहते है। जल, जलवाष्प में बदल कर हवा एवं जलवाष्प का मिश्रण बनाता है। वास्तव में पौधों की जड़ें भूमि से जल को अवशोषित ना करके जलवाष्प के कणों तथा हवा के कणों को ग्रहण करती है। यानि की भूमि को जल नहीं, वाफसा चाहिए जो की 50 प्रतिशत हवा और 50 प्रतिशत वाष्प का समिश्रण होता है। भूमि में जल इतना ही देना चाहिए जितना की वह जलवाष्प में परिवर्तत हो सके और यह तभी संभव हो पाता है जब पौधों/फलदार पौधों को उनकी जो दोपहर के समय छाया बनती है उसके बाहर की तरफ पानी दिया जाये क्योंकि पौधे की जो जड़ें खाद्य पदार्थ ग्रहण करती है वो छाया के बाहरी तरफ होती है। अतः जल व जल के साथ जीवामृत को दोपहर 12 बजे के बाद पौधें की जो छाया बने उसके बाहर 1–1.5 फिट अंतर पर नाली बनाकर देना चाहिए।

जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग में प्रयुक्त विभिन्न उत्पादों को बनाने की विधियां

बीजामृत बनाने की विधि : इसे बनाने के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है–

1. गाय का गोबर 250 ग्राम,
2. गाय का मूत्र 250 मिली लीटर
3. गाय का ताजा दूध 250 ग्राम
4. चुना पत्थर 10–15 ग्राम
5. पानी 5 लीटर

इन सभी को प्लास्टिक की एक बाल्टी में डालकर मिला देते है तथा इस मिश्रण को रातभर पडा रहने देते है। अगले दिन इसका उपयोग बीजों के संवर्धन में किया जाता है।

जीवामृत बनाने की विधि: इसे बनाने के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है–

1. गाय का गोबर 10 किलोग्राम
2. गाय का मूत्र 10 लीटर
3. गुड़ 2 किलोग्राम
4. दाल का आटा 2 किलोग्राम
5. उपजाऊ मृदा 1 किलोग्राम
6. पानी 100 लीटर

इन सभी को प्लास्टिक के एक बडे ड्रम में डालकर लकड़ी के डंडे की सहायता से मिला देते है तथा सड़ने के लिए छोड़ देते है। इस मिश्रण को दिन में 2–3 हिलाते है ताकि ये अच्छी तरह से सड़ जाये। ये प्रक्रियाँ 5–7 दिन तक चलती है। इसके बाद ये बन कर तैयार हो जाता है।

अग्निस्त्र बनाने की विधि : इसे बनाने के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है–

1. बेसराम (Ipomea) की पत्तियाँ 2 किलोग्राम
2. तेज हरी मिर्च 1 किलोग्राम
3. लहसुन 1 किलोग्राम
4. गाय का मूत्र 20 लीटर
5. नीम की पत्तियाँ 10 किलोग्राम

बेसराम (Ipomea) की पत्तियाँ, हरी मिर्च, लहसुन और नीम की पत्तियाँ को गाय के मूत्र में डालकर बारीक कूट लेते है। अब इस मिश्रण को उबालते है, जब इसकी मात्रा आधी रह जाती है तब उबालना बन्द कर देते है। ठण्डा होने के बाद मिश्रण को छान लेते है। इस छनीत को प्लास्टिक या काँच की बोतल में भर कर रख लेते है।

ब्रह्मस्त्र बनाने की विधि : इसे बनाने के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है–

1. गाय का मूत्र 20 लीटर
2. सीताफल की पत्तियाँ 4 किलोग्राम
3. नीम की पत्तियाँ 6 किलोग्राम
4. पपीता की पत्तियाँ 4 किलोग्राम
5. अनार की पत्तियाँ 4 किलोग्राम
6. अमरूद की पत्तियाँ 4 किलोग्राम,

नीम की पत्तियों को गाय के मूत्र में डालकर अच्छे से कूट लेते है। इसके बाद एक अलग पात्र में सीताफल की पत्तियों, पपीता की पत्तियों, अनार की पत्तियों एवं अमरूद की पत्तियों को पानी के अन्दर कूट लेते है। इसके बाद दोनों मिश्रणों को मिला देते है। अब इसे थोडे–थोडे समय के अन्तराल पर 5 बार उबालते है ताकि मिश्रण की मात्रा आधी रह जाये। इसके बाद इसे 24 घण्टे तक पड़ा रहने देते है। अब इसे छान कर प्लास्टिक या काँच की बोतल में भर कर रख लेते है। इसे बनाने के 6 महीने बाद तक प्रयोग कर सकते है।

नीमस्त्र बनाने की विधि: इसे बनाने के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है–

1. गाय का गोबर 4 किलोग्राम
2. गाय का मूत्र 10 लीटर
3. नीम की पत्तियाँ 10 किलोग्राम
4. पानी आवश्यकतानुसार

नीम की पत्तियों को आवश्यकतानुसार पानी लेकर उसके अन्दर कूट लेते है। अब इसके अन्दर गाय का गोबर तथा मूत्र मिला देते है। अब इसे 24 घण्टे तक सड़ने के लिये छोड़ देते है इस दौरान बीच–बीच में मिश्रण को हिलाते रहते है। 24 घण्टे के बाद मिश्रण को छान (फिल्टर) लेते हैं। छने हुए मिश्रण में पानी मिलाकर इसका तनुकरण करते है और इसकी कुल मात्रा 200 लीटर बना लेते है।

विभिन्न जैविक उत्पादों को प्रयोग करने की विधियाँ

बीजामृत

इसके द्वारा बोये जाने वाले बीजों को उपचारीत करके उनका संवर्धन किया जाता है। ये बीजों के अंकुरण को बढ़ता है तथा अनेक प्रकार की बीमारीयों से उनका बचाव करता है।

जीवामृत

इसका प्रयोग खाद के रूप किया जाता है। जैविक पदार्थो के मिश्रण से बने होने की वजह से फसल व मृदा पर इसका कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है। ये मृदा में पोषक तत्वों को बढ़ाने के साथ–साथ मृदा के लिए लाभदायक जीवों की संख्या में भी वृद्धि करता है।

अग्निस्त्र

अग्निस्त्र का प्रयोग मुख्यत: तना छेदक, फल छेदक, फली छेदक एवं पत्ति लपेटक कीटों के नियंत्रण के लिए किया जाता है। अग्निस्त्र की 2–3 लीटर मात्रा को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करते है तो ये 1 एकड़ के खेत में खडी फसल पर छिडकाव के लिए पर्याप्त होती है।

ब्रह्मस्त्र

ब्रह्मस्त्र का प्रयोग मुख्यत: फ ल छेदक, फली छेदक एवं चुशक कीटों के नियंत्रण के लिए किया जाता है। ब्रह्मस्त्र की 2–2.5 लीटर मात्रा को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करते है तो ये 1 एकड़ के खेत में खडी फसल पर छिडकाव के लिए पर्याप्त होती है।

नीमस्त्र

फसल में लगने वाले चुशक कीटों व मिलि बग के नियंत्रण के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग फसल की पत्तियों पर करते है। इसकी 100 लीटर मात्रा 1 एकड़ के खेत में खडी फसल पर छिडकाव के लिए पर्याप्त होती है।

सारांश :

ऊपर वर्णित सभी बातों से ये पता चलता है की जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग में उपयोग होने वाले सभी घटकों का निर्माण किसान अपने घर पर आसानी से कम खर्च पर कर सकता है। उसे बाजार जा कर महंगे उर्वरक व कीटनाशक नहीं खरीदने पड़ेंगे जिससे उसके समय व धन दोनो की बचत होगी। साथ ही साथ जैविक घटकों के उपयोग से मृदा की उर्वरता में भी बढोत्तरी होगी, फलस्वरूप उत्पादन बढ़ेगा और इसके परिणाम स्वरूप किसानों की आय में भी वृद्धि होगी।

***

ढिंगरी मशरुम का महत्व, पौष्टिक गुण एवं उत्पादन विधि

सरिता, डी.एल. यादव एवं सोमदत्त
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा एवं स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

ढ़िगरी मशरुम का महत्व

ढ़िगरी मशरुम एक पौष्टिक गुणों से भरपूर स्वादिष्ट शाकाहारी सब्जी है, जिसे भारत सहित विश्व में अधिकांश देश उपयोग में लेते हैं। ढ़िगरी मशरुम का उत्पादन करना लाभदायक है क्योंकि यह एक नगदी फसल हैं जिसे अल्प अवधि एवं कम जगह में उगाया जा सकता है। यह सालभर उपज देने वाली फसल है। मशरुम की खेती छायादार जगह पर की जा सकती है अतः किसान इसको कमरों या झोंपड़ीयों में आसानी से उगा सकता है। इसमें अधिक महंगे उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें काम आने वाली सामग्री में गेहूँ या चावल का भूसा, मशरुम के बीज (स्पॉन), पॉलथीन की थैलियां, रबर बेण्ड, लकड़ी या लोहे की बनी रैकें, पॉलीथीन की शीट (10x5 सेमी) एवं सिंचाई करने के लिए फुट स्प्रेयर पम्प की आवश्यकता होती है। उपरोक्त सभी सामग्री किसान आसानी से जुटा कर इसकी खेती कर सकता है। यदि 1000 किलोग्राम सूखा भूसा लेते हैं तो 600–650 किलो ताजा मशरुम प्राप्त होती है जिसे बाजार में 100 रुपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से बेच सकते हैं। यदि मशरुम को ताजा अवस्था में नहीं बेचा जा सके जो इसे सुखाकर 500 रुपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से भी बेच सकते है। इसके अलावा इसके कई उत्पाद बनाकर बेचे जा सकते हैं जैसे मशरुम की बड़ियाँ, पापड़, अचार, चटनी, बिस्किट, सूप पाउडर, समोसे, पेटिस, कैण्डी, डोसा एवं पिज्जा इत्यादि। अतः किसान इसे उगाकर अतिरिक्त आमदनी प्राप्त कर सकता है तथा स्वयं अपने लिए भी एक स्वादिष्ट, पौष्टिक सब्जी को काम में ले सकता है। इसमें अनेक औषधीय गुण भी होते हैं। इसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट की प्रचुरता होती है। इस मशरुम पर कीट–व्याधियों का प्रकोप दूसरी मशरुम की अपेक्षाकृत कम होता है।

ढ़िगरी मशरुम के पौष्टिक गुण

मानव शरीर के विकास हेतु संतुलित आहार की आवश्यकता होती है जिसमें प्रोटीन, विटामिन्स, वसा, कार्बोहाइड्रेट तथा खनिज लवण उचित मात्रा में सम्मिलित होने चाहिये। सामान्यतया शाकाहारी भोजन में ये तत्व पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलते हैं। अतः इनकी कमी को पूरा करने के लिए दैनिक आहार में कुछ अन्य भोज्य पदार्थों को शामिल करना चाहिए जिससे इस पोषक तत्वों की कमी को दूर किया जा सके। ढिंगरी मशरुम में उच्चकोटि की प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेटस, विटामिन्स तथा खनिज तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते हैं। प्रोटीन की गुणवत्ता उसमें उपस्थित अमीनो अम्लों पर निर्भर करती है। मानव शरीर सभी आवश्यक अमीनों अम्लों का निर्माण नहीं कर सकता। अतः इसके लिए इन्हें भोजन से प्राप्त किया जाता है। अतः दैनिक आहार में 100 ग्राम मशरुम को विभिन्न रुपों में शामिल करने से कुपोषण को दूर किया जा सकता है। इसमें रेशे की मात्रा अधिक होती है जिससे पाचन शक्ति में वृद्धि होती है। इसमें वसा की मात्रा/कोलेस्ट्रोल की मात्रा बहुत कम होती है, जो हृदयरोगियों के लिए भी लाभकारी है। इसमें उपस्थित सभी पोषक तत्वों की मात्रायें इस प्रकार है:–

ढ़िंगरी मशरुम के पौष्टिक गुणों का विवरण :

- पानी – 90 प्रतिशत
- शुष्क अवयव – 10 प्रतिशत
- प्रोटीन – 2.5–3.0 प्रतिशत
- कार्बोहाइड्रेट – 4–6 प्रतिशत
- वसा – 0.4–0.6 प्रतिशत
- रेशा – 1 प्रतिशत
- राख – 1 प्रतिशत

ढ़िंगरी मशरुम के औषधिय गुण

इसमें पोटेशियम तथा सोडियम खनिजों की बहुलता के कारण यह रक्तचाप कम करने में सहायक है। रेशेदार एवं क्षारीय तत्वों की बहुलता होने से यह कब्ज व अजीर्ण रोग से ग्रसित रोगियों के लिये फायदेमंद हैं। कोलेस्ट्रोल की अनुपस्थिति, कम स्टॉर्च तथा वसा होने से यह हृदय व मधुमेह रोगियों के लिए भी लाभदायक है। इसमें वसा कम होने से इसका उपयोग मोटापा कम करने में भी सहायक है। महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की बहुलता एवं सहज उपलब्धता के कारण यह कमजोर व्यक्तियों, गर्भवती महिलाओं एवं बढ़ती उम्र के बच्चों के लिए बहुत महत्वपूर्ण आहार है। ढ़िंगरी की एक प्रजाति हिपसीजॉयगस में बीटा–ग्लूकेन तत्व उपस्थित होता है, जो केन्सर रोग में प्रभावकारी होता है। यह मशरुम अनेक बीमारियों के विरुद्ध रोग प्रतिरोधक क्षमता भी विकसित करने में सहायक है। ढ़ींगरी की एक प्रजाति (प्लूरोटस ऑस्ट्रीस्टस) माँस पेशियों व जोड़ों के दर्द में सहायक होती है। इसमें कैंसर के प्रति प्रतिरोधक क्षमता भी होती है।

मशरुम उत्पादन के लिए सामग्री

1. भूसा:– गेहूँ या चावल का भूसा जो ताजा फसल से लिया हुआ ही उपयोग में लिया जाता है। भूसा बारिश में भीगा हुआ एवं पुराना नहीं हो, मिट्टी या दूसरी फसल/खरपतवार के अवशेष/ बीज नहीं होने चाहिए । भूसे के टुकड़ों की लम्बाई 1–1.5 इंच होनी चाहिए।
2. प्लास्टिक का ड्रम ढक्कन वाला होना 200 लीटर क्षमता का होना चाहिए।
3. पॉलीथीन शीट 8–10 मीटर लम्बी तथा 3–4 मीटर चौड़ी भरने के लिए पॉलीथीन की थैलियां (साइज "24 x 18") रबर बैण्ड, बीज तौलने के लिए तराजू।
4. अच्छी उपज हेतु शुद्ध बीज/स्पॉन।

भूसे का उपचार

भूसे में उपस्थित अवांछित फफूंद के बीजाणु, कीटाणु, जीवाणु इत्यादि के अलग करने के लिए इसे गर्म पानी से उपचारित किया जाता है।

गर्म पानी से उपचार

भूसे को 10–12 घंटे तक साफ, शुद्ध पानी में गलाना चाहिए। उसके बाद पानी से निकालकर उबलते हुए पानी में एक घंटा रखना चाहिए जिससे भूसे में उपस्थित अवांछनिय जीवाणु, बीजाणु, कीटाणु/ कीटों के अण्डें अन्य फफूँदी के बीजाणु गर्म जल से नष्ट हो जायें फिर इसे निकालकर ढलान वाली जगह पर या जालीदार स्टेण्ड पर अतिरिक्त पानी निकलने के लिए छोड़ दिया जाता है।

भूसे में नमी की मात्रा का पता लगाना

सफल मशरुम उत्पादन के लिए भूसे में नमी की मात्रा उचित होना अनिवार्य है क्योंकि यदि नमी अधिक होगी तो भूसा एवं मशरुम स्पॉन सड़ जायेगा एवं कवक जाल ठीक से नहीं फैलेगा। अतः नमी की उचित मात्रा का पता करने के लिए भूसे को हाथ में लेकर दबायें यदि उसमें से पानी की बूंदे गिरने लगे तो समझना चाहिए कि इसमें पानी की मात्रा ज्यादा हैं। पर यदि भूसे को हाथ से दबाने पर पानी न निकले और केवल हाथ गीला रह जाये तो यह भूसे में नमी की उचित मात्रा होगी।

बीजाई करना

जिस स्थान पर बीजाई करनी हो वहाँ अच्छी तरह से साफ–सफाई कर लेनी चाहिए ।वहाँ 48 घण्टे पहले 2 प्रतिशत फार्मलीन से छिड़काव कर देना चाहिए एवं उस जगह को 48 घण्टे तक बन्द रखना चाहिए। एक लम्बी पॉलीथीन शीट जिसकी लम्बाई 8–10 मीटर और चौडाई 3–4 मीटर हो, को बिछा देना चाहिए। उपचारित किया हुआ भूसा इसी शीट पर डालना चाहिए।

बीज की दर

बीज की दर 3 प्रतिशत गीले भूसे के वजन के अनुसार रखनी चाहिए।

भूसे में बीज मिलाने का तरीका

सबसे पहले भूसे को तोलकर पॉलिथीन शीट पर डालते हैं फिर उसके वजन के हिसाब से बीज को तोलकर उसमें अच्छी तरह से मिला लेते हैं। फिर 125–150 गेज की मोटी पॉलीथीन की थैलियों (24″ ऊँची व 18″ व्यास) में भर देते हैं।

- **परतदार विधि :** इस विधि में बीज परत के रूप में मिलाते हैं। जब भूसे को थैलियों में भरना हो तब बीज की पहली परत 4 इंच पर, दूसरी 8 इंच पर तथा तीसरी परत 12 इंच पर बीज को हाथ से फैलाकर डालते हैं। सबसे ऊपर भूसे को थैलियों में दबा कर भरना चाहिए। बीजाई के बाद थैलियों के मुँह को ऊपर से बन्द करके रैकों पर रखना चाहिए। हवा के आवागमन के लिए थैलियों में 8–10 छेद कर देना चाहिए तथा नीचे के दोनों किनारे थोड़े–थोड़े काट देने चाहिए जिससे यदि भूसे में अतिरिक्त पानी हो तो वह भी बाहर निकल जायें।

बीजाई करने के बाद फसल की देखभाल :

- जिस कमरे में बैग्स रखे जाते हैं, वहाँ का तापमान 25 ± 2 सेल्सियस से ज्यादा न बढ़े। इसके लिए कमरे मे हवा का आवागमन ठीक रखना चाहिए। तापमान अधिक हो तो कमरे की दीवारे भी गीली कर देनी चाहिए। आर्द्रता/नमी की उचित मात्रा बनाने के लिए ह्यूमिडिफॉयर चलाना चाहिए।
- उत्पादन कक्ष में रोशनी ठीक होनी चाहिए।
- यदि उत्पादन कक्ष का फर्श कच्चा हो तो कक्ष में नमी अधिक रहेगी इससे उत्पादन में वृद्वि होगी।
- प्रति दिन उत्पादन कक्ष का निरिक्षण करना अनिवार्य हैं क्योंकि जब बीज बढवार हो रही हो तो यह ध्यान रखने वाली बात हैं कि पोलीथीन बेग्स में कोई दूसरी फफूंदी जैसे काली, हरी तो नहीं आ गई। दूसरी फफूंदी का धब्बा नजर आते ही निकाल देना चाहिए क्योंकि ये बीज बढवार को रोकते हैं जिससे उपज में भी कमी आती हैं।
- यदि उत्पादन कक्ष में मक्खी या मच्छर दिखाई दे तो उत्पादन कक्ष में लाइट ट्रेप रखने चाहिये।
- उत्पादन कक्ष में साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखे, ज्यादा लोगों

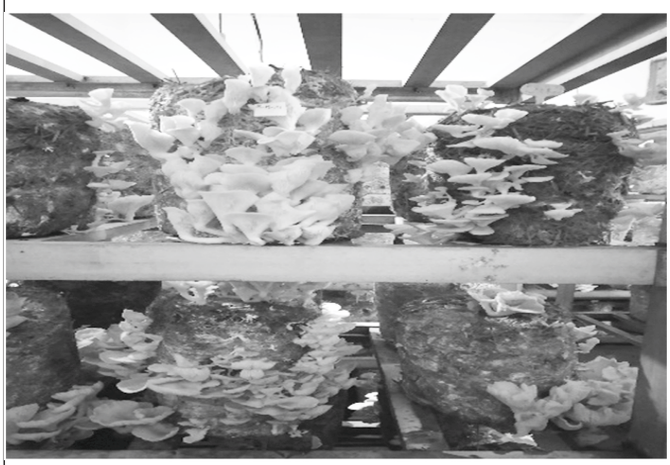

का आवागमन न हो। कक्ष में अन्दर जाने के लिए जूते, चप्पल अलग रखे। कुल मिलाकर उत्पादन कक्ष में उचित नमी, स्वच्छ वायु, साफ सफाई रखते हुए हम अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

- बीजाई करने के 15–20 दिनो के बाद ढिंगरी मशरूम के बीज से कवकजाल पॉलीथीन बेग्स के अन्दर सारे भूसे में अच्छी तरह फैल जायेगा अर्थात् पूरा बेग कवकजाल के कारण सफेद नजर आने लगता हैं तब हल्के हाथ से पॉलीथीन को घुमाते हुए बेग को उल्टा कर लेते हैं। इस प्रकार बेग से पॉलीथीन अलग कर ली जाती हैं और अब भूसा सफेद बंडल के रूप में बन जाता हैं। इन बंडलो को रैको पर जमा दिया जाता हैं। और एक दिन बाद से ही बण्डलो पर स्प्रेयर पम्प द्वारा हल्का–हल्का पानी दिन में 2–3 बार आवश्यकतानुसार दिया जाता हैं। ध्यान रहे पानी हमेशा स्प्रेयर पम्प द्वारा ही दें। अधिक पानी नहीं देना चाहिए। अधिक पानी देने से भूसा एवं कवकजाल के सड़ने का अंदेशा रहता हैं जिससे उत्पादन नहीं होता हैं।
- बीज बढवार पूर्ण होने पर उत्पादन कक्ष का तापमान 20–30 से. तथा नमी 80–90 प्रतिशत बनाये रखनी चाहिए। कमरे के दरवाजे व खिडकियों को खोलकर ताजी हवा एवं रोशनी आने दे।
- इन स्पॉन रन हुए बंडलो मे से 6–7 दिनों के पश्चात इसके चारों और छोटे–छोटे सफेद रंग के मशरूम के बटन निकलते हैं जो 3–5 दिनों में तोड़ने योग्य हो जाते हैं।
- इस प्रकार मशरूम बंडल के चारो तरफ से उगती हैं जब इसका आकार लगभग 8–12 से.मी. हो जाये व किनारे ऊपर को मुडने लगे तो इन्हें हल्का सा मोडकर तोड लेना चाहिये। आठ से दस दिनो के अन्तर पर मशरूम की दूसरी फसल शुरू हो जाती हैं। तथा 50–60 दिनों में 4–5 बार मशरूम निकलती हैं। जिसका 2–3 बार तोडने के पश्चात बंडल की सतह को चारों तरफ से हल्का सा खुरचने पर और अंकुरण निकलते हैं।

उपज : करीब 100 किलोग्राम सूखे भूसे से 60–70 किलोग्राम ताजा ढींगरी मशरूम आसानी से प्राप्त की जा सकती है अर्थात् 1000 किलोग्राम सूखे भूसे कम से कम 600–700 किलोग्राम ढींगरी मशरूम प्राप्त होती हैं।

अच्छे बीज स्पॉन की पहचान

- स्पॉन 20–25 दिन से ज्यादा पुराना नहीं होना चाहिए।
- कवकजाल अच्छा फैला हुआ होना चाहिए।
- कोई अन्य काली, हरी, पीली, नीली, फफूंदी, जीवाणु आदि का दाग धब्बा नहीं होना चाहिए।
- स्पॉन का रंग सफेद होना चाहिए।
- इसमें ढिंगरी मशरूम की सुगन्ध आनी चाहिए।
- बीजो में यदि कोई अन्य दुर्गन्ध आती हो तो ऐसे बीजो को काम नहीं लेना चाहिए।
- कवकजाल सारे दानों पर फैला हुआ होना चाहिए।
- बीजाई के समय भी बीजों को अधिक समय तक खुला न छोडें।
- यदि स्पॉन को तुरन्त काम में नहीं लेना हो तो उसे 15–20 से. तापमान पर रखे।

पॉलीथीन बैग्स में कवकजाल नहीं फैलने के कारण

- यदि भूसे का उपचार ठीक से न किया गया हो।
- बीज पूर्ण रूप से शुद्व न हो अर्थात् कोई अन्य फफूँदी/जीवाणु मिले हो।
- भूसे मे पानी की मात्रा अधिक हो।
- तापक्रम बहुत कम या ज्यादा हो।
- भूसे में पानी की मात्रा आवश्यकता से कम हो।
- बीज बढ़वार के समय डिप्टेरियन मक्खियों का आक्रमण हो गया हो ।
- इसके अलावा बीजों की निर्धारित मात्रा से कम मात्रा का उपयोग करना।

ढींगरी मशरूम में लगने वाले कीड़े एवं रोग

बीज बढ़वार के समय भूसे पर लगने वाली खरपतवार फफूँदे

मशरूम उत्पादन कक्ष का तापक्रम कम होता हैं तथा नमी अधिक होती हैं जो कि कीड़े–मकोड़े व अन्य फफूँदो को पनपने के लिए भी अनुकूल वातावरण हैं। अतः कक्ष में साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखना अनिवार्य हैं। बीज बढ़वार के समय कवकजाल फैलने की अवस्था में मुख्य खरपतवार फफूँद जैसे ट्राइकोडरमा, एस्परजिलंस, राइजोपस, म्युकर, स्केलेरोशियम रोल्फसा एवं क्रोप्राइनस लगती हैं। ये खरपतवार ढिंगरी

के कवक जाल को बढने से रोकती हैं। यदि कवकजाल पूर्ण रूप से नहीं फैलेगा तो अंकुरण कम होगा जिससे उपज बहुत कम प्राप्त होगी।

रोग से बचाव

- बीज की गुणवत्ता उत्तम होनी चाहिए तथा इसकी खरीददारी प्रमाणिक प्रयोगशाला से करनी चाहिए।
- हमेशा ताजा बीज काम में ले, जिससे उपज भी अधिक प्राप्त होती है एवं कीट, व्याधियां भी कम आती हैं।
- भूसे का उपचार ठीक से किया जाना चाहिए। भूसे में नमी की मात्रा अधिक नहीं होनी चाहिए।
- सिंचाई के लिए लिया जाने वाला पानी शुद्व होना चाहिए। बहुत दिनों से एक जगह एकत्रित पानी काम में नही लेना चाहिए क्योंकि उसमें कई तरह की मख्खी, मच्छर के अण्डे, सूत्रकृमी व अन्य अनावश्यक जीवाणु, कीटाणु होते हैं जो मशरूम की फसल को नुकसान पहुँचाते हैं।
- यदि पानी टैंक का हो तो, उसे समय–समय पर 0.15 प्रतिशत ब्लीचिंग पाउडर से उपचारित करना चाहिए।
- यदि किसी बैंग में कोई दूसरी फफूँदी (काली, नीली, पीली) दिखाई दे तो उस जगह से पॉलीथीन काटकर, सक्रंमित भाग को चिमटी की सहायता से अच्छी प्रकार से हटा देते हैं। फिर उस स्थान पर बाविस्टिन + केल्शियम कार्बोनेट (1 ग्राम + 10 ग्राम) के मिश्रण का भुरकाव करना चाहिए। भुरकाव के बाद उस जगह 48 घण्टे तक पानी नहीं डालना चाहिए।
- यदि किसी बैग में खरपतवार फफूँद का प्रयोग अधिक हो तो ऐसे बैग को वहाँ से हटा कर उत्पादन कक्ष से 300–400 मीटर दूर कहीं फैंक देना चाहिए।
- इसी प्रकार बीजाई करते समय यह विशेष ध्यान दे कि जो बीज हम काम ले रहे है वह काला, पीला, हरा, नीला नहीं होना चाहिए। कोई अन्य फफूँद का दाना हो तो उसे हटा देना चाहिए। फिर साबुन से हाथ धोकर बीजाई करें। यदि अन्य फफूँद से ग्रसित ज्यादा बीज के दाने हैं तो ऐसे बीज को काम न लें।

ढिंगरी मशरूम में लगने वाले कीट

इसमें डिप्टेरियन एवं फोरोइड मक्खियाँ का प्रकोप अधिक होता हैं। ये मक्खियाँ बीज बढ़वार के समय कवकजाल की गंध से आकर्षित होती हैं। यदि कमरे में नमी अधिक हो और वायु का आवागमन कम हो एवं मशरूम उत्पादन कक्ष, में अधिक व्यक्तियों का आवागमन हो या कक्ष में कहीं पानी भरा हो तो इनका प्रकोप होने की सम्भावना अधिक रहती है।

उपचार

- बीजाई से लेकर तुडाई तक साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखें। कक्ष में कहीं भी पानी नहीं भरा रहना चाहिए। भूसे में नमी की उचित मात्रा होनी चाहिए। वायु का आवागमन अच्छा होना चाहिए। प्रकाश की भी ठीक व्यवस्था होनी चाहिए।
- उत्पादन कक्ष में ठीक समय–समय पर डी. डी. वी. पी. (0.1 प्रतिशत) नामक कीटनाशी का छिडकाव 7 दिन के अन्तराल में फर्श एवं दिवारों पर करना चाहिए। दवाई का स्प्रे शाम को करके खिड़की, दरवाजे बंद कर देना चाहिए। सुबह स्वच्छ वायु का आवागमन होने दें।
- उत्पादन कक्ष के आसपास डी. डी. वी. पी. (0.1 प्रतिशत) + फामर्लिन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव 7 दिन के अन्तराल पर करें।
- मक्खियों को आकर्षित करने के लिए प्रकाश प्रपंच का उपयोग करना चाहिए।
- प्रकाश के स्त्रोत के पास पॉलीथीन शीट में चिपचिपा पदार्थ लगाकर लटकाना चाहिए, जिससे प्रौढ़ कीट चिपक कर मर जाए।
- उत्पादन कक्ष के खिड़की दरवाजे पर जाली (मच्छर अवरोधि) प्लास्टिक/लोहे की लगा दें जिससे स्वच्छ वायु आ सके लेकिन मक्खी, मच्छरों को रोका जा सके।

गिलोय : एक प्रतिरक्षा बढ़ाने वाली बेल

कनिका चौहान, एस.बी.एस. पांडेय, आंचल शर्मा एवं सी.के.आर्य

उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

परिचय

गिलोय (टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिया) एक प्रकार की बेल है जो आमतौर पर जगंलों–झाड़ियों में पाई जाती है। प्राचीन काल से ही गिलोय को एक आयुर्वेदिक औषधि के रुप में इस्तेमाल किया जाता रहा है। गिलोय के फायदों को देखते हुए ही हाल के कुछ सालों से अब लोगों में इसके प्रति जागरुकता बढ़ी है और अब लोग गिलोय की बेल अपने घरों में लगाने लगे हैं। हालांकि अभी भी अधिकांश लोग गिलोय की पहचान ठीक से नही कर पाते हैं। इसकी पत्तियों का आकार पान के पत्तों के जैसा होता है और इनका रंग गाढ़ा हरा होता है। गिलोय को सजावटी पौधे के रुप में भी अपने घरों में लगा सकते हैं। गिलोय को गुडूची, अमृता आदि नामों से भी जाना जाता है। आयुर्वेद के अनुसार गिलोय की बेल जिस पेड़ पर चढ़ती है उसके गुणों को भी अपने अंदर समाहित कर लेती है, इसलिए नीम के पेड़ पर चढ़ी गिलोय की बेल को औषधि के लिहाज से सर्वोत्तम माना जाता है। इसे नीम गिलोय के नाम से जाना जाता है। यह जड़ी बूटी पूरे उष्णकटिबंधीय एशिया में समुद्रतल से 300 मीटर की ऊँचाई तक पाई जाती है।

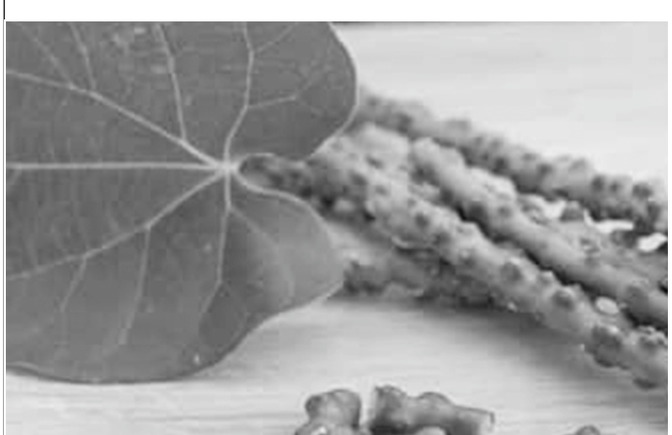

टिनोस्पोरा कॉडफोलिया की पत्ती व तना

टिनोस्पोरा कॉडफोलिया का फल व तना

यह भारत के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है जो कुमाऊं से असम और म्यांमार, बिहार, कोंकण से श्रीलंका तक फैला हुआ है। यह किसी भी प्रकार की मिट्टी और अलग–अलग जलवायु परिस्थितियों में अच्छी तरह से बढ़ता है। इसके पौधे की खेती मई–जून के महीने में तना कटान (स्टेम कटिंग) द्वारा की जाती है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग के बिना औषधीय पौधों को उगाया जाता है। जैविक खाद जैसे कि फार्म यार्ड खाद , वर्मी–कम्पोस्ट, हरी खाद आदि का उपयोग प्रजातियों की आवश्यकता के अनुसार किया जा सकता है। बीमारियों को रोकने के लिए, जैव कीटनाशक नीम (गिरी, बीज और पत्ते), चित्रकमूल, धतूरा, गाय के मूत्र आदि से तैयार किए जा सकते हैं (अथवा मिश्रण), परिपक्व पौधों को इकट्ठा किया जाता है, छोटे टुकड़ों में काटकर छाया में सुखाया जाता है। यह एक महत्वपूर्ण औषधि है और विभिन्न रूपों जैसे सत्व, घृत, तेल, स्वरस आदि के लिए आयुर्वेद में प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेद में, गिलोय सबसे आवश्यक जड़ी बूटियों में से एक है। यह भी ज्ञात है कि गिलोय त्रि–दोषों अर्थात वात, पित्त और कफ को शांत करने में कुशल है।

रासायनिक संगठन और उपयोग

गिलोय में मुख्य रूप से एल्कलॉइड, ग्लाइकोसाइड्स, स्टेरॉयड, सेसक्विटेरापॉइड, एलीफेटिक यौगिक, आवश्यक तेल, फैटी एसिड और पॉलीसेकेराइड का मिश्रण होता है। अल्कलॉइड में बेर्बेरिन, कड़वा गिलोइन, गैर–ग्लाइकोसाइड गिलोनिन गिलोस्टेरोल शामिल हैं। टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिया में प्रमुख फाइटोकॉन्स्टिट्यूएंट में टिनोस्पोरिन, टिनोस्पोराइड, टिनोसोपरसाइड, कॉर्डिफ़ोलाइड, कॉर्डिफ़ोल, हेप्टाकोसैनोल, क्लेरोडेन फ़्यूरिन डिटेरेपिन, डिटेरेपॉइड फ़ेरानोलैक्टोन टिनोसोपरिडाइन, कोलुम्बिन और बोस्टरोस्टेरोन शामिल हैं। इसके तने से बेरबेरिन, पाल्मेटीन, टेम्बर्टरीन, मैग्नीफ्लोरिन, कोलिन और टिनोसपोरिन पाए जाते है। गिलोय पौधे के विभिन्न भागों जैसे पत्तियों, तनों, जड़ों आदि से विभिन्न सक्रिय घटक प्राप्त होते हैं। गिलोय का तना आयुर्वेदिक चिकित्सा विज्ञान में ज्वर (बुखार) के उपचार में इसकी उपयोगिता के लिए प्रसिद्ध है। गिलोय हाइपोग्लाइसेमिक प्रभाव दिखाता है, और आंशिक रूप से मधुमेह के प्रबंधन में मौखिक मधुमेह विरोधी सिंथेटिक दवाओं के रूप में उपयोग किया जाता है। गिलोय, मेद्या रसायन में से एक है जिसका नियमित रूप से सेवन जीवनकाल को बढ़ाने वाला, रोग को कम करने वाला, शक्ति को बढ़ाने वाला, अग्नि, रंग, आवाज और बुद्धि को बढ़ाने वाला है। उचित मात्रा में नियमित सेवन से व्यक्ति दीर्घायु, स्मृति, बुद्धिमत्ता, बीमारी से मुक्ति, यौवन, स्वतंत्रता, चमक, रंग और आवाज की उत्कृष्टता, काया और भावना अंगों की अधिकतम शक्ति, विचार–विमर्श में पूर्णता, सम्मान और प्रतिभा को प्राप्त करता है। गिलोय का उपयोग प्रतिरक्षा में सुधार या बढ़ाने के लिए किया जाता है । इसमें एंटीऑक्सिडेंट की संख्या होती है जो मुक्त कणों से लड़ते हैं, आपकी

कोशिकाओं को स्वस्थ रखते हैं और बीमारियों से छुटकारा दिलाते हैं। गिलोय विषाक्त पदार्थों को हटाने और रक्त को शुद्ध करने में मदद करता है, बैक्टीरिया के खिलाफ लड़ता है। पाचन सुधारने और आंत्र संबंधी समस्याओं के इलाज में गिलोय बहुत फायदेमंद है। गिलोय में एंटी–इंफ्लेमेटरी और एंटी–ऑर्थ्रेटिक गुण होते हैं जो गठिया और इसके कई लक्षणों का इलाज करने में मदद करते हैं। जोड़ों के दर्द के लिए गिलोय के तने का पाउडर, गठिया के इलाज के लिए अदरक के साथ इसका उपयोग किया जाता है। भारत के कई हिस्सों में, गिलोय दृष्टि स्पष्टता को बढ़ाने में मदद करता है। इस पौधे में एंटी–एजिंग गुण होते हैं जो डार्क स्पॉट्स, पिपल्स, फाइन लाइन्स और झुरयों को कम करने में मदद करते हैं। यह व्यक्ति को चमकती त्वचा प्रदान करता है।

निष्कर्ष

गिलोय एंटीऑक्सिडेंट्स का एक प्रचुर स्रोत है, जो विषाक्त पदार्थों को हटाने में मदद करता है, रक्त शोधक के रूप में, बैक्टीरिया से लड़ता है जो विभिन्न रोगों का कारण बनता है और यकृत के साथ–साथ मूत्र पथ के संक्रमण का मुकाबला करता है। गिलोय प्रकृति में एंटी–पायरेटिक होने के कारण डेंगू, स्वाइन फ्लू और मलेरिया जैसी कई जानलेवा बीमारियों के लक्षणों को कम करता है। पौधे में एल्केलॉइड्स, ग्लाइकोसाइड्स, लैक्टोन और स्टेरॉयड के रूप में सक्रिय यौगिकों की मात्रा पायी जाती है। गिलोय में फाइटोकेमिकल्स की विविधता का विभिन्न चिकित्सा स्थितियों में उपयोग किया है जैसेः एंटीओस्टियोपोरेटिक, हेपेटोप्रोटेक्टिव, इम्युनोमोडायलेटरी, एंटीहाइपरग्लाइसेमिक, एंटी–ट्यूमर, एंटी–एच आई वी। गिलोय में एंटी–इंफ्लेमेटरी और एंटी–ऑर्थ्रेटिक गुण होते हैं जो गठिया और इसके कई लक्षणों का इलाज करने में मदद करते हैं। गठिया के इलाज के लिए अदरक के साथ इसका उपयोग किया जा सकता है। भारत के कई हिस्सों में, गिलोय को आँखों पर लगाया जाता है क्योंकि यह दृष्टि स्पष्टता को बढ़ावा देने में मदद करता है। गिलोय में एंटी–एजिंग गुण होते हैं जो डार्क स्पॉट्स, पिपल्स, फाइन लाइन्स और झुर्रियों को कम करने में मदद करते हैं। यह वास्तव में एक चमत्कारी जड़ी बूटी है जिसका उपयोग अनेक बीमारियों में किया जाता है। लेकिन, गिलोय को अभी तक फेडरल ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन द्वारा अनुमोदित नही किया गया है, क्योंकि चिकित्सा पर्यवेक्षण के बिना पौधे की खपत कब्ज जैसे दुष्प्रभावों का उत्पन्न कर सकती है। इसलिए, इस जड़ी बूटी के लाभों को प्रमाणित करने के लिए नैदानिक परीक्षणों के साथ–साथ आगे के अध्ययन की आवश्यकता है।

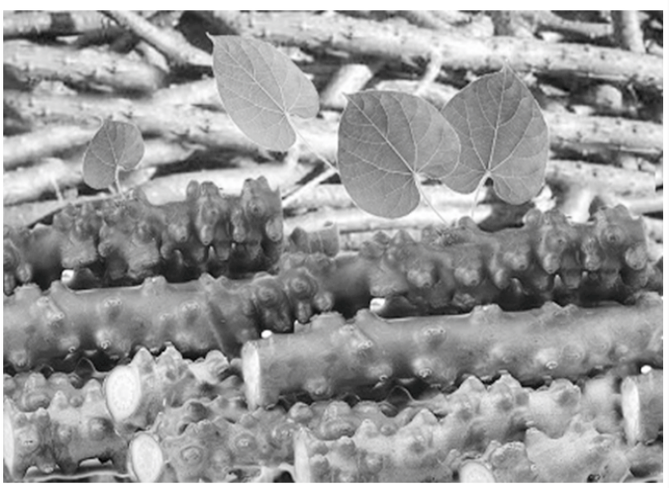

टिनोस्पोरा कॉडफोलिया

किसान के लिए वरदान - मेहंदी

धीरज सिंह, एम.के. चौधरी, ऐश्वर्या डुडी एवं चंदन कुमार
कृषि विज्ञान केन्द्र (काजरी), पाली–मारवाड़ 306401 (राज.)

राजस्थान देश में मेहंदी पत्ती का सबसे प्रमुख उत्पादक प्रदेश है। राजस्थान में पाली जिला विशेषकर सोजत और मारवार जंक्शन क्षेत्र में मेहंदी मुख्य फसल के रूप में ली जाती है इसीलिए यह क्षेत्र इसके उत्पादन का प्रमुख व्यापारिक केन्द्र है। जिले की 40000 हैक्टर क्षेत्रफल में फैली व्यवसायिक खेती से किसानों, व्यापारियों और इससे जुड़े हुए उद्योगों को प्रतिवर्ष 40 करोड रूपये से अधिक की आमदनी होती है। इसी कारण सोजत पूरे विश्व में मेहंदी उत्पादन और विपणन की प्रमुख मंडी है। आज सोजत क्षेत्र में मेहंदी का पाउडर बनाने वाले तथा मेहंदी की सफाई करने वाले लगभग 50–60 कारखाने लगे हुए हैं। इन कारखानों के मालिक अपना उत्पाद तैयार कर पूरे विश्व के साथ साथ भारत के दूर–दराज के गावों, कस्बों और शहरों में भी आपूर्ति करते हैं।

मेहंदी एक बहुवर्षीय सूखारोधी झाडीनुमा पौधा है। राजस्थान में इसकी खेती, पत्तियों में पाये जाने वाले रंग (1 से 2.5 प्रतिशत लासोन) के लिये की जाती है, जो कि केश रंगने और पारम्परिक साज–सज्जा में काम आता है। इसके अलावा फूलों से प्राप्त सुगन्धित तेल (इत्र) और पौधे के विभिन्न औषधीय गुण सुप्रसिद्ध है। स्त्रियां इसकी पत्तियां पीसकर हाथ–पांव में लाल रंग के रंगने के काम में उपयोग करती हैं। इसके पुष्प, हरिताभ, श्वेत, गुच्छों से सुगन्धित शाखाऐं खिलते हैं तथा फल गुल एवं कई बीज वाले होते हैं। मेहंदी के पौधे सम्पूर्ण भारत में पाए जाते हैं। कई जगह इनको खेतों में बगीचों की बाउंड्री पर भी लगाया जाता है तथा फेंसिंग हेतु भी प्रयुक्त किया जाता है। इसके फूलों की अत्यधिक मीठी सुगंध मन को अत्यंत भाती हैं। वर्तमान में सौजत की मेहंदी का कई ब्रांड नामों से विपणन हो रहा है। 125 से अधिक ब्रांड नामों से बिकने वाली मेहंदी के कारण ही सौजत मंडी का नाम पश्चिम राजस्थान में मेहंदी मंडी के नाम से प्रसिद्ध है जहाँ मेहंदी बेचने के लिए दूर गांवों से आने वाले किसानों के लिए सभी तरह की उचित व्यवस्था है।

जलवायु और भूमि

यद्यपि मेहंदी के पौधे अनेक प्रकार की मृदा व जलवायु में उगाये जा सकते है लेकिन अच्छी गुणवत्ता की पैदावार के लिये सामान्य बलुई दोमट भूमि एवं उष्ण और शुष्क जलवायु उत्तम है। मेहंदी के पुनर्विकास और अच्छी वृद्धि के लिये तेज धूप, शुष्क वातावरण और गर्मी जरूरी है। मेहंदी कम पानी तथा लवणीय व क्षारीय भूमि में भी बड़ी आसानी से वृद्धि करती है। इन्ही कारणों से पश्चिमी राजस्थान में सीमान्त शुष्क और अर्ध – शुष्क क्षेत्र मेहंदी उत्पादन के लिये श्रेष्ठ साबित हुए है। इसकी खेती की विधि सरल है और समिति संसाधनों पर निर्भर करती है।

खेत की तैयारी

मेहंदी बहुवर्षीय फसल है जो एक बार लगाने पर सालों तक (100 साल) उत्पादन देती रहती है। अतः जिस खेत में मेहंदी लगानी होती है उस खेत को पहले गर्मी में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें जिससे भूमि से लगने वाले कीटाणु नष्ट हो जाएँ। मानसून की पहली बरसात के साथ खेत में 2–3 जुताई कर पाटा लगाकर खेत को तैयार करें।

पौधशाला

मेंहदी फसल की शुरूआत पौधरोपण से होती है। एक हैक्टर में पौधरोपण के लिये 1.5 मी. x 10 मी. की 8–10 क्यारियों तैयार की जाती हैं। क्यारियों में 40–50 से.मी. गहरी बलुई मिट्टी होनी चाहिये तथा 8–10 टन प्रति हैक्टर की दर से सडा हुआ खाद या कम्पोस्ट डालना चाहिए। दीमक नियंत्रण के लिये मिथाइल पाराथियॉन 10 प्रतिशत चूर्ण मिलाना चाहिये। मेहंदी का बीज बहुत छोटा होता है अतः 5–6 किलोग्राम बीच उपचारित कर क्यारियों में समान दर बोना चाहियें।

बीज उपचार

बीज को 10–15 दिन तक लगातार पानी में भीगोकर रखा जाता है, हर दिन ताजा पानी प्रयोग करते हुए समय की बचत के लिये 3 प्रतिशत नमक के घोल में एक दिन भीगो कर एक और दिन साधरण पानी में रखकर धो लेना पडता है।

बुवाई का समय : फरवरी – मार्च

बुवाई

उपचारित बीज की मात्रा के बराबर रेत मिलाकर बीज को क्यारियों में छिडककर बुवाई करते है तत्पश्चात् हल्का झाडू फेरकर व बारीक सडा हुआ गोबर ऊपर से छिडक कर बीज को ढक दिया जाता है।

सिंचाई

10 से 15 दिन में बीज का अंकुरण पूरा होने तक प्रतिदिन सिंचाई की आवश्यकता होती है। बाद में हर दूसरे दिन या आवश्याकतानुसार सिंचाई करनी चाहियें।

निराई–गुडाई

बुवाई के 20–30 दिन बाद और समय–समय पर हल्की निराई–गुडाई करते है। पौधशाला में पौधें 36 से 4 माह की अवधि में 30 से 45 सेमी की ऊँचाई प्राप्त कर लेते है और खेत में स्थानान्तरित करने योग्य हो जाते है।

रोपाई

रोपाई के लिए खेत में पहले हल, तवेदार (हैरो) और कल्टीवेटर चला कर मिट्टी भुरभुरी कर ली जाती है दीमक नियंत्रण हेतु खेत में 25 किलो ग्राम प्रति हैक्टर मिथाइल पाराथियॉन या क्लोरपाइरीफॉस डस्ट का छिडकाव तथा उत्पादकता व जल संग्रहण बढाने के लिये 5 टन प्रति हैक्टर कम्पोस्ट खाद डालनी चाहियें। पौधों की रोपाई जुलाई–अगस्त में बरसात के बाद जल्दी की जाती है। पौधाशाला में उपलब्ध रोप (जड से उखाडे पौधे) के अधिकतम तना व जड को काट कर छोटा करके खेत में स्थानान्तरित करते है। खेत में रोपाई 45 से 30 से.मी. की दूरी पर खूटी से 10–15 मि.मी. गहरा गडढा करके की जाती है क्लोरपाइरीफॉस 35 ई.सी. घोल में जडों को गीला करके लगाने से दीमक से अतिरिक्त बचाव होता है। जड को सूखने से रोकने के लिए आस–पास की मिट्टी को अच्छी तरह दबाना अति महत्वपूर्ण है। रोपण कार्य पूर्ण होने के बाद एक दो बरसात होना जरूरी होती है ताकि रोप खेत में सफलतापूर्वक स्थापित हो सके रोपे गये पौधो के उचित विकास के लिये 40 किलोग्राम प्रति हैक्टर नत्रजन पौधरोपण के समय देनी होती है।

सिंचाई

सामान्यत: मेहंदी की खेती बरसात पर आधारित खरीफ फसल के रूप में लेते है। सफल रोपण के बाद दो या तीन अच्छी वर्षा मेहंदी पत्ती उत्पादन के लिए पर्याप्त है। लेकिन प्रथम वर्ष पौधरोपण के बाद वर्षा नही होने की स्थिति में मेहंदी की सफल स्थापना के लिये एक सिंचाई की आवश्यकता रहती है। तत्पश्चात् उत्पादन बढाने या अत्याधिक सूखे से फसल को बचाने के लिये सिंचाई करना एक वैकल्पिक जरूरत है।

अन्तराशस्य व पोषण

खरपतवार नियन्त्रण और नमी संरक्षण के लिये निराई–गुडाई जरूरी है। प्रथम वर्ष कुदाली से और बाद के वर्षो में हल चलाकर कर सकते है।

मेहंदी फसल में एक से दो गुडाई 30–50 दिन के अन्तराल पर की जाती है। पौधों की उचित बढवार के लिये मेंहदी के स्थापित खेतों या बागवानों में हर वर्ष प्रथम निराई–गुडाई के समय 40 किलो ग्राम प्रति हैक्टर नत्रजन उर्वरक पौधों के कतारों के दोनो तरफ डालनी चाहिए। अच्छी बरसात की स्थिति में दूसरी निराई–गुडाई के समय इसे दोहराये। मेहंदी की फसल में उचित दूरी रखकर दलहन फसलों का समावेश भी किया जा सकता है

कीट नियन्त्रण

मेहंदी का मुख्य शत्रु दीमक है। इसके नियंत्रण के लिए 25 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से मिथाइल पारथियॉन या क्लोरपाइरीफॉस डस्ट खेत में निराई–गुडाई के समय डालनी चाहियें।

कटाई

मेहंदी की फसल को साल में एक या दो बार काटते है। मुख्य फसल मानसून के बाद तेज गर्मी से पत्तियां पकने पर अक्टूबर–नवम्बर में काटी जाती है। कटाई का समय उत्पादन की दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। शाखाओं के निचले भाग में पत्तियां पूरी तरह पीली पडने पर और स्वत: झडने से पहले ही मेहंदी की फसल काट लेनी चाहियें, क्योकि पत्तियों का आधा उत्पादन पौधों के निचले एक चौथाई भाग मिलता है। पत्तियों से भरी डालियों/शाखाओं को जमीन के नजदीक से काट कर सूखे खेत या अन्य स्थन पर खुले में सूखने के लिये तीन–चार दिन तक रख दिया जाता है, सुखाते समय फसल बरसान/पानी से भीगनी नही चाहियें एक भी बौछार कटी हुई मेहंदी की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती है। इसलिये कटाई के समय मौसम साफ और खुला होना आवश्यक है। सूखने के बाद पत्तियों को झाड कर इकट्ठा किया जाता है और बोरियों में भरकर सूखे स्थान पर भण्डारण किया जाता है।

उपज

बारानी फसल से औसतन 1000 से 1500 किलोग्राम सूखी पत्ती हैक्टर प्राप्त होती है। स्थापना के प्रथम तीन वर्ष तक पैदावार कम होती है (200 से 600 किलो ग्राम प्रति हैक्टर) मेहंदी बागान सामान्यत: 20 से 30 साल तक उपजाऊ और लाभप्रद रहती है। इस अंतराल के बाद दीमक से इतने पौधे नष्ट हो जाते है कि लाभ के लिए किसान को पुन: नई फसल लगानी पड सकती है।

आर्थिक लाभ

मेहंदी की खेती में मुख्य लागत प्रथम वर्ष लगभग रूपये 15000/– प्रति हैक्टर आती है, जिसमें 15 प्रतिशत खर्च जुताई, 55 प्रतिशत मजदूरी और 30 प्रतिशत रोप खरीदने पर होता है स्वयं रोप उगाने से यह खर्च और कम किया जा सकता है बाद के वर्षो में इसका आधा व्यय रख–रखाव, कटाई, पत्ती झडाई इत्यादि पर होता है। मेहंदी की खेती से कुल आमदनी व लाभ सूखी पत्ती की उपज, गुणवत्ता और बाजार (मण्डी) में आवक पर निर्भर करती है। मण्डी में सूखी पत्ती औसतन 20 रूपये प्रति किलोग्राम की दर से बिकती है। एक अनुमान के अनुसार 750 किलोग्राम उपज से लगभग 6000/– रूपये प्रति हैक्टर शुद्ध लाभ होता है। स्थापना के प्रथम तीन वर्षो से इससे कम आर्थिक लाभ मिलता है परन्तु बाद में अच्छी उत्पादन व भाव मिलने पर शुद्ध लाभ 2 से 3 गुणा बढ सकता है।

मेहंदी की खेती के लाभ

- हर घर में कार्य में आने के कारण इसके विपणन में आसानी रहती है जिससे उत्पादन लागत मिल जाती है।
- बहुवर्षीय फसल होने के कारण प्रति वर्ष उत्पादन की निश्चितता तथा बार बार के नई फसल लगाने के झंझट से मुक्ति।
- बहुवर्षीय फसल होने के कारण बाढ़, सुखा आदि आपदाओं का विशेष असर नहीं होता है।
- खाली पड़ी भूमि का सदुपयोग।
- मृदा के जल संरक्षण में लाभकारी।
- इसके उत्पादन में रासायनिक एवं कीटनाशक दवाओं की आवश्यकता नहीं होती है जिससे किसानों को कम लागत आती है।

मेहंदी में कटाई उपरांत क्रियाएँ

❋❋❋

संकर नेपियर घास कम लागत में कई वर्ष हरे चारे की उपलब्धता

रामआसरे, नूपुर शर्मा एवं बी.एल. मीना,
कृषि विज्ञान केन्द्र, सवाई माधोपुर

परिचय :– नेपियर घास को हाथी घास भी कहते है। यह एक बहुवर्षीय हरा चारा है। पशु पोषण की आवयश्यकताओं की पूर्ति करने तथा दुग्ध उत्पादन की लागत को कम करने में हरे चारे का एक विशेष महत्व है। इनकी जड़ों या तनों के टुकड़े को बोने के काम में लेते है। इसकी लम्बाई 14 से 16 फीट होती है। यह एक लम्बी पत्तियों वाला मुलायम और रसदार तने वाला पौधा है, जो पशुओं को पौष्टिक हरा चारा प्रदान करता है, हरे चारे की अवस्था में प्रोटीन की मात्रा 2.5 से 3.00 प्रतिशत तक होती है और शुष्क पदार्थ की अवस्था में प्रोटीन की मात्रा 8 से 10 प्रतिशत तथा रेशे की मात्रा 28–30 प्रतिशत तक होती है, इसके चारे में कैल्शियम 0.88 प्रतिशत, फास्फोरस 0.24 प्रतिशत तथा इसकी पाचकता 58 प्रतिशत तक होती है। इसलिए पशु इसे बड़े चाव से खाते है।

मृदा : इसके लिए दोमट या चिकनी दोमट, बलुई दोमट मिट्टी बहुत अच्छी होती है इसकी खेती हेतु अच्छे जल निकास वाली भूमि होनी चाहिए। यह 5–8 पी.एच. को सहन करने की क्षमता रखती है।

तापमान : संकर नेपियर घास अधिकतर 15 से 30 डिग्री सेल्सीयस ताप पर उगाया जाता है इसमे सूखा सहन करने की क्षमता होती है।

खेत की तैयारी : इसके लिए एक गहरी जुताई हैरो या मिट्टी पलट हल से तथा 2–3 जुताई कल्टीवेटर से करके रिज मेकर से 60 से.मी. से 100 से.मी. की दूरी पर मेढ़ बना लेते है। मेढ़ की ऊँचाई लगभग 25 से. मी. रखते है।

नेपियर घास की प्रजातियाँ : नेपियर घास की निम्न प्रजातियां है, संकर नेपियर–3, संकर नेपियर–6, संकर नेपियर–7, संकर नेपियर–10, एन.बी.–21, सी.ओ.–1, सी.ओ.–2, सी.ओ.–3, सी. ओ.–4 व सी.ओ.–5 प्रमुख प्रजातियां है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : बहुवर्षीय फसल होने के कारण खेत की तैयारी के समय 250 से 300 क्विं. सड़ी गोबर की खाद, 75 किग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है रोपण के 30 दिन पश्चात् 75 कि.ग्रा. नत्रजन तथा प्रत्येक कटाई के पश्चात् 75 कि.ग्रा नत्रजन प्रति हैक्टेयर देनी चाहिए।

रोपण का समय : नेपियर घास की रोपण का सबसे उत्तम समय जुलाई–अगस्त होता है, इसके अलावा फरवरी से लेकर सितम्बर तक इसकी कटिंग को रोपण कर सकते है।

रोपण की विधि व कटिंग की मात्रा : 60 से 100 सेमी. की दूरी पर 25 सेमी. ऊँची बनी मेढ़ो के दोनो तरफ दो तिहाई ऊँचाई पर जिगजैक रूप से संकर नेपियर घास की जड़ो या तने की कटिंग को 60 सेमी. की दूरी पर लगाकर, आधार पर अच्छी तरह दवा देते है, संकर नेपियर घास को कटिंग करते समय इस बात को ध्यान देना चाहिए कि अगर जड़ वाली गाँठ है तो एक गाँठ की कटिंग करना चाहिए और तने वाले कटिंग में दो या तीन गाँठ का होना चाहिए। कटिंग लगाने के लिए 3–4 माह पुरानी तनों का चुनाव करना चाहिए। तने के कटिंग को इस प्रकार लगाना चाहिए की तने का एक गाँठ जमीन के अन्दर एक या दो गाँठ जमीन के ऊपर रहनी चाहिए और कटिंग को सीधा न लगाकर तिरछा लगाना चाहिए पौधो से पौधो की दूरी 60 सेमी. तथा लाइन से लाइन की दूरी 100 से.मी., 80 से.मी., 75 से.मी. तथा 60 से.मी. रखनी चाहिए। इसके लिए कटिंग की संख्या क्रमशः 33300, 41400, तथा 55300 रखनी चाहिए। अगर कटिंग को जिगजैग न लगाकर सीधी लाईन में लगायी जाये तो 60 ग 75 सेमी. में कुल 12000 से 14000 प्रति हैक्टेयर कटिंग की जरूरत होती है। इसके रोपण के बाद प्रथम बार 15 से 20 कल्ले तथा इसके बाद 40 से 50 कल्ले का फूटान होता रहता है।

सिंचाई प्रबन्धन : पहली सिंचाई रोपण के तुरन्त बाद तथा इसके तीन दिन पश्चात् दूसरी सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। इसके पश्चात् मौसम के अनुसार 7–12 दिन पर अथवा आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए।

खरपतवार प्रबन्धन : रोपण के 30 दिन के भीतर मेढ़ों पर से निराई गुड़ाई करके घास निकाल देनी चाहिए तथा बीच के स्थान पर कस्सी द्वारा खुदाई करके खरपतवार निकाल देना चाहिए। इसी समय खाली स्थानों पर गैप फीलिंग कर देना चाहिए।

कटाई : संकर नेपियर घास की पहली कटाई 60 से 70 दिन पश्चात् तथा इसके बाद फसल के बढ़वार के अनुसार 40 से 45 दिन (4 से 5 फीट की ऊँचाई होने पर) के अन्तराल पर भूमि की सतह से मिलाकर कटाई करनी चाहिए।

किसानों की आय दोगुनी करने वाली कम लागत की तकनीकें

सोमदत्त एवं सरिता
स्वामी केशवानन्द कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

इस वास्तविकता से इनकार नहीं किया जा सकता है कि आज भी हमारे देश में बहुसंख्यक किसान सीमान्त या लघु कृषकों की श्रेणी में आते हैं। मोटे तौर पर ऐसे कृषकों से आशय है एक हेक्टेयर से कम भूमि जोत वाले कृषक इनमें से अधिकांश किसानों की पैदावार अपने परिवार के लिये गुजारा करने लायक खाद्यान्न के उत्पादन तक ही सिमटी हुई है। सरप्लस उपज तो बहुत दूर की बात है– बाढ़, सूखा या अन्य विपदाओं के कारण किसानों के लिये कभी–कभी तो खेती की लागत भी निकालनी मुश्किल पड़ जाती है। अच्छी उपज मिल भी जाये तो उचित मूल्य मिलना मुश्किल होता है। फलों–सब्जियों जैसी शीघ्र खराब होने वाली फसलें किसानों को मजबूरी में स्थानीय खरीददारों के हाथों कम दामों में बेचना पड़ जाता है। ऐसे ही अन्य बहुत से कारणों के कारण वर्तमान में किसान परिवार के बच्चे खेती को आय अर्जन का आधार बनाने से कतराते हैं और रोजगार की तलाश में शहरों की तरफ पलायन करने को कहीं बेहतर विकल्प समझते हैं।

देश में कृषि अनुसंधान और कृषि शिक्षा का संचालन व प्रबन्धन करने वाली शीर्ष संस्था के रूप में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अधीन कार्यरत 103 से अधिक कृषि अनुसंधान संस्थानों, परियोजना निदेशालयों और लगभग 721 कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा इस क्षेत्र में निरन्तर काम किया जा रहा है। इनके द्वारा विशेषकर सीमान्त, छोटे और मझोले किसानों के लिये कृषि को लाभदायी बनाने, कम लागत की खेतीबाड़ी की तकनीकों, समेकित कृषि प्रणाली, खेती के साथ पशुपालन, मुर्गीपालन, मात्स्यिकी, मधुमक्खी पालन, रेशम उत्पादन, खाद्य प्रसंस्करण, जैविक खेती, वैज्ञानिक खेती के विभिन्न आयामों आदि पर आधारित तमाम कृषि प्रणालियों और प्रौद्योगिकियों एवं तकनीकों का विकास किया गया है। उपरोक्त तकनीकों का उपयोग कर सीमान्त किसान भी अपनी छोटी जोतों से साल भर में न सिर्फ कई फसलों का उत्पादन कर सकते हैं बल्कि समेकित/मिश्रित कृषि को अपनाकर अतिरिक्त आय आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। ऐसी ही कम लागत वाली कृषि प्रौद्योगिकियों/तकनीकें जो छोटे और सीमान्त किसान बिना ज्यादा निवेश के आसानी से अपना सकते हैं, तथा खेत की औसत वार्षिक आय बढ़ा सकते है निम्न प्रकार हैं–

मोटे अनाजों की खेती करना: इस वर्ग में ज्वार, बाजरा, कोडो, छेना, कंगनी, रागी जैसे गौण अनाजों की खेती की जा सकती है। इनमें प्रोटीन, रेशे, पोषक तत्वों, विटामिनों आदि की भरपूर मात्रा पाई जाती है। मोटे अनाज शुष्क क्षेत्रों में अच्छी तरह से उगते हैं और मिट्टी की उर्वरता और नमी की सीमांत परिस्थितियों में वर्षा आधारित फसलों के रूप में विकसित होते हैं। ये संभवतः घरेलू प्रयोजनों के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला पहला अनाज है, आमतौर पर उगाए जाने वाले मोटे अनाज ज्वार, बाजरा, रागी, कांगनी, कोड़ों, छेना और कुटकी आदि हैं। चावल और गेहूं के विपरीत, जिन्हें उर्वरक और पानी के संदर्भ में कई इनपुट की आवश्यकता होती है, गौण अनाज सूखे क्षेत्रों में अच्छी तरह से वर्षा आधारित फसलों के रूप में विकसित होते हैं। अत्यधिक पौष्टिक, गैर–लसदार और फाइबर से भरपूर, ये पचने में आसान होते हैं। इन नई फसलों व तकनीकों में अन्तः फसलों (ज्वार–अरहर, ज्वार–सोयाबीन आदि) की खेती से भी अधिक आय प्राप्ति के विकल्प पर जोर दिया गया है। अधिक उपज देने में सक्षम विभिन्न मोटे अनाजों का विकास भी इस क्रम में किया गया है। उदाहरण के लिये ज्वार की अधिक पैदावार देने में सक्षम किस्म ज्वार संकर–सी एस एच–17, इससे प्रचलित ज्वार की किस्मों की तुलना में 50 प्रतिशत से अधिक उपज सम्भव है।

जावा सिट्रोनेला/रोशा गुच्छ घास से कमाई: विभिन्न औद्योगिक एवं घरेलू उपयोगों के कारण सिट्रोनेला तेल की माँग में हाल के वर्षों में काफी बढ़ोत्तरी हुई है। इसके पत्तों से लेमनग्रास की तरह का तेल निकलता है। यह तेल बाजार में 1000 से 1200 रुपए प्रति किलोग्राम की दर से बिकता है। इसकी खेती के पहले वर्ष में 150–200 किलोग्राम तथा दूसरे से पाँचवें वर्ष तक 200–300 किलोग्राम तक तेल इस बहुवर्षीय घासरूपी फसल की कटाई से प्राप्त हो जाता है। पहले साल ही इसकी बुआई पर खर्च होता है। उसके बाद आगामी वर्षों में इस पर नगण्य खर्च होता है। मोटे तौर पर इससे किसान को शुद्ध लाभ 50–70 प्रतिशत तक या 80 हजार रुपए प्रति हेक्टेयर तक मिल जाता है।

प्याज और लहसुन–आधारित नई तकनीकों से खेती करना: खरीफ के मौसम में प्याज एवं लहसुन का उत्पादन कम होता है। इसके पीछे मुख्य रूप से पानी का जमाव, कीट व रोगों का प्रकोप और खरपतवार जैसे कारक जिम्मेदार हैं। हाल ही में भारत के प्याज एवं लहसुन अनुसंधान निदेशालय, पुणे द्वारा खरीफ में भी प्याज उत्पादन की ऐसी प्रौद्योगिकियों का विकास किया गया है जिनके इस्तेमाल से किसान इन फसलों की उत्पादकता बढ़ाकर उच्च कीमत प्राप्त कर सकते हैं।

खाद्य प्रसंस्करण को बढ़ावा देना: ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय तौर पर उपजने वाले अधिकांश कृषि उत्पादों का मूल्य संवर्धन या वैल्यू एडिशन करके बेचने से अधिक कीमत मिलना सम्भव है। उदाहरण के लिए आलू एवं केले के चिप्स, विभिन्न प्रकार के अचार, पापड़, बड़ियां, दूध से तैयार होने वाला पनीर, खोया, छाछ जैसे प्रोडक्ट्स, गेहूँ से दलिया, चने से सत्तू, धान से चिड़वा, आम की चटनी, मुरब्बा, विभिन्न मसालों से तैयार स्वादिष्ट बुकनू, मक्के एवं बाजरे का आटा, मूँगफली के भुने हुए दाने, चिक्की, सोयाबीन से दूध, फलों से शर्बत, गन्ने से गुड़, तिलहनों से तेल

निकालना, दलहनी फसलों से दालें तैयार करना, धान से चावल निकालना आदि का काम खासतौर पर किया जा सकता है। ऐसे उत्पादन कार्यकलापों से जुड़कर खाली समय में स्थानीय महिलाएँ अतिरिक्त आय कमा सकती हैं। अमूमन ऐसे कार्यों के लिए पूर्व–प्रशिक्षण की आवश्यकता कम ही होती है। इनके अतिरिक्त फूलों से इत्र बनाना, लाख से चूड़ियाँ एवं खिलौने बनाना, कपास के बीजों से रुई अलग करना एवं पटसन से रेशे निकालने आदि को भी इस क्रम में आय अर्जन का अतिरिक्त साधन बनाया जा सकता है।

जलसंचय प्रौद्योगिकी से कृषि आय बढ़ाना: खेतों में वर्षाजल अमूमन बिना किसी उपयोग के बह जाता है और इसके साथ ही खेत की उर्वर मिट्टी की ऊपरी परत भी बह जाती है। इस समस्या के समाधान के लिये केन्द्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद द्वारा एक विशेष जल संचयन प्रौद्योगिकी को विकसित किया गया है। इसके तहत खेत के निचले हिस्से में तालाब बनाए जाते हैं और खेत के जलबहाव को नालियों के जरिए इस तालाब तक पहुँचाया जाता है। इसका दोहरा फायदा किसानों को मिलता है। पहला तो यही कि सूखे की स्थिति में भी फसलों की सिचाई के लिये जल की उपलब्धता सुनिश्चित हो जाती है और दूसरा, इस तालाब में मछली, मोती पालन इत्यादि से भी अतिरिक्त आय हासिल की जा सकती है।

गन्ना की खेती में लागत को कम करने वाले कृषि यंत्रों का उपयोग करना: कृषि श्रमिकों की बढ़ती लागत तथा कृषि उपयोगी पशुओं को पालने का प्रचलन कम होने से गन्ने की खेती किसानों के लिये काफी खर्चीली होती जा रही है। इस समस्या को दूर करने के उद्देश्य से भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा गन्ने की खेती के लिये जरूरी सभी प्रकार के कृषि उपयोगी उपकरणों/यंत्रों का विकास किया गया है। इनकी मदद से गन्ने के खेत की तैयारी, बुवाई, निराई–गुड़ाई एवं अन्य कृषि क्रियाओं के खर्च में उल्लेखनीय रूप से खर्च को कम करना सम्भव है। इससे बीज, खाद व अन्य कृषि आदानों की मात्रा में 15–20 प्रतिशत की कमी, गन्ना पौध सघनता में 5–20 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी, उत्पादकता में 10–15 प्रतिशत की वृद्धि तथा श्रम लागत में 20–80 प्रतिशत तक की बचत की जा सकती है।

धान में समेकित कीट प्रबंधन प्रणाली अपनाना: धान की अधिकतर प्रजातियों में कीट रोगों से प्रतिरोधकता नही होने के कारण फसल में तनाछेदक, पत्ती लपेटक, भूरा फुदका रोग, गंधी बग, शीथ ब्लाईट, ब्लास्ट तथा बेकानी जैसे रोगों के कारण उपज में काफी कमी हो जाती है। समेकित कीट प्रबन्धन से कीटनाशकों के छिड़काव में कमी, सन्तुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग तथा उर्वरक लागत में कमी तथा सिचाई एवं मजदूरी के खर्च में काफी बचत होती है। इस प्रकार कुल फसल लागत में भी कमी आती है। इतना ही नही कम कीटनाशकों के प्रयोग से तैयार ऐसे धान की बाजार में कीमत भी ज्यादा मिलती है।

अन्तरवर्ती फसल प्रणाली से मुनाफा कमाना: इस प्रणाली में एक ही खेत में, एक ही मौसम एवं समय में दो या दो से अधिक फसलों को एक साथ उगाया जा सकता है। इस प्रकार कम लागत में प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। इस पद्धति में धान्य फसलों के साथ दलहनी फसलों को भी उगाना सम्भव है। एक सीधी तो दूसरी फैलने वाली फसल लगाने से खरपतवारों का नियंत्रण भी इस अन्तरवर्ती फसल प्रणाली में किया जा सकता है। यही नही फसलों को रोगों और कीटों से भी इस विधि से बचाया जा सकता है, जैसेः चने की फसल में धनिया को अन्तरवर्ती फसल के रूप में उगाने से चने में लगने वाले कीटों की रोकथाम कर अधिक उपज ली जा सकती है।

कन्दीय फसलों से आमदनी लेना: आलू व अन्य कन्दीय फसलों जेसेः कसावा, शकरकंद, जिमीकंद टेनिया, याम अरारूट आदि की खेती में जुड़े किसान इन फसलों की उपयुक्त किस्में, आधुनिक उत्पादन एवं संरक्षण तकनीकें तथा प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियाँ अपनाकर अपनी आमदनी को उल्लेखनीय रूप से बढ़ा सकते हैं। विश्वास नही होगा पर यह सच है कि पश्चिम बंगाल में आलू से मिलने वाली शुद्ध आय, चावल और गेहूँ की तुलना में लगभग तीन गुना ज्यादा और इसी प्रकार बिहार में भी आलू से मुनाफा परम्परागत फसलों की तुलना में कही अधिक मिलता है। इन कन्दीय फसलों से कई तरह के मूल्य समवर्धित खाद्य उत्पाद भी बनाए जाते हैं। इनमें प्रमुख तौर पर आलू के चिप्स और कसावा से तैयार किये जाने वाले स्नैक्स फूड, पास्ता आदि का जिक्र किया जा सकता है। जैव इथेनाल उत्पादन में भी कसावा का महत्त्व बहुत अधिक है।

कुमट को महत्त्व देना: कुमट एक वृक्ष है जिससे गोंद मिलता है। यह गोंद अत्यन्त उच्च गुणवत्ता वाला होता है एवं बाजार में 500 से 800 रुपए प्रति किलोग्राम की दर से बिकता है। इसका उपयोग दवा उद्योग, खाद्य उत्पादों तथा अन्य उद्योगों में किया जाता है। अमूमन ये वृक्ष अर्ध–शुष्क जलवायु और कंकरीली–पथरीली भूमि पर होते हैं। कृषि वानिकी के अन्तर्गत इसे बड़े पैमाने पर उगाकर बहुत ही अच्छी आय हर साल प्राप्त की जा सकती है।

जैविक खेती के लिये कृषि पद्धतियाँ अपनाना: जैविक उत्पादों या ऑर्गेनिक प्रोडक्ट्स का बाजार मूल्य अधिक मिलने के कारण किसानों का जैविक खेती की ओर बड़ी संख्या में आकर्षित होना स्वाभाविक है। किसानों के बीच जैविक कृषि की बढ़ती लोकप्रियता को देखते हुए बहुत अधिक संख्या में फसलों/फसल पद्धतियों पर आधारित जैविक कृषि पद्धतियों का विकास किया गया है। इनका प्रचार–प्रसार राष्ट्रीय जैविक कृषि केन्द्र, परम्परागत कृषि विकास योजना तथा राष्ट्रीय बागवानी मिशन के माध्यम से किया जा रहा है।

समेकित कृषि प्रणाली मॉडल: देश के विभिन्न कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उद्देश्य से लघु एवं सीमान्त कृषकों के

अनुरूप विविध फसलों, बागवानी उत्पादों, कृषि वानिकी, पशुधन तथा मात्स्यिकी पर आधारित अधिक संख्या में बहु–उद्यमी समेकित कृषि प्रणाली मॉडलों का विकास किया गया है। इनके उपयोग से कृषकों की आय को लगभग 1.5–3.5 लाख रुपए तक बढ़ाया जा सकता है।

आलू उत्पादन के लिये निम्न लागत पद्धतियों का उपयोग: आलू की खेती में अन्य फसलों की तुलना में कही अधिक निवेश करना पड़ता है। इस प्रकार की खेती में कुल लागत का लगभग 35–40 प्रतिशत बीजों, 40 प्रतिशत कृषि मजदूरी, 14 प्रतिशत उर्वरकों एवं खाद तथा 7 प्रतिशत सिचाई पर खर्च हो जाता है। अनुसंधान संस्थानों द्वारा आलू उत्पादन में श्रम, बीज, जुताई, उर्वरक तथा सिचाई निवेशों में होने वाले व्यय में बचत के लिये विशिष्ट प्रौद्योगिकी विकसित की गई है। किसान इसे अपनाकर कम लागत में आलू उत्पादन कर अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

इसबगोल की खेती से लाभ: इसबगोल एक महत्त्वपूर्ण फसल है जो रबी के मौसम के दौरान राजस्थान में उगाई जाती है। इसके बीज के आवरण को भूसी के नाम से जाना जाता है और इसमें कई तरह के औषधीय गुण होते हैं। यह जानकर आश्चर्य होगा कि अन्तरराष्ट्रीय बाजार में इसबगोल की भूसी निर्यात करने वाला भारत एकमात्र देश है। इसकी खेती से बड़ी सरलता से अच्छी कमाई प्रति हेक्टेयर की जा सकती है।

शुष्क क्षेत्रों में सब्जियाँ उगाने के लिये ड्रिप या घड़ा सिचाई प्रौद्योगिकी का उपयोग करना: जल की कमी वाले क्षेत्रों में फसलों के अधिक उत्पादन के लिये जल–संरक्षण तथा दक्षतापूर्ण जल इस्तेमाल करने से सम्बन्धित नीतियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके लिये सीमित जल का कुशलता से उपयोग कर बेहतर फसलोत्पादन के लिये घड़ा सिचाई तकनीक उपयुक्त है। इस पद्धति का नाम इसके प्रमुख घटक घड़े के नाम पर ही रखा गया है। इस प्रणाली से टमाटर की उपज में तीन गुना तथा अन्य सब्जियों में दो गुना लाभ–लागत अनुपात मिलता है। यह अत्यन्त साधारण प्रौद्योगिकी है और इस तकनीक की आर्थिकी पूर्णतः घड़ों के जीवन पर निर्भर करती है। इसके तहत धरातल पर रखे घड़ों के विपरीत दबे हुए घड़ों से पानी सीधे मृदा में जाता है और घड़ों की दीवारों से वाष्पन के जरिए जल की हानि भी नही होती है।

बीज उत्पादन तकनीकों को अपनाना: स्वपरागित फसलों की किस्मों की गुणवत्ता में साल–दर–साल गिरावट आने लगता है। ऐसे में बीजों को 5 से 6 वर्षों के अन्तराल के बाद बदलना जरूरी हो जाता है। बाजार से हर बार नए बीज खरीदकर बोना खेती की लागत को काफी बढ़ा देता है। इसलिये किसानों के लिये यह जरूरी हो जाता है कि वे इस्तेमाल के लिये प्रजनक, सत्यापित या प्रमाणित बीज किसी सरकारी अथवा विश्वसनीय स्रोत से खरीदकर न सिर्फ इनका इस्तेमाल करें बल्कि स्वयं इनका बहुगुणन भी करें। इस प्रकार किसान विभिन्न फसलों का बीज तैयार कर उन्नत बीजों का प्रयोग वे अगले सीजन में कर सकते हैं और आकर्षक मूल्य पर इनको बेचकर अतिरिक्त लाभ भी कमा सकते हैं। इसी प्रकार फल, फूलों और सब्जियों के बीज अत्यंत छोटे होते हैं जो बिना उपचार के नही उगते। कुछ का तो सिर्फ प्रवर्धन ही किया जाता है। इसलिए बाग–बगीचों एवं पुष्प वाटिकाओं में फल–फूल एवं शोभाकारी पेड़–पौधों की बागवानी की अन्य फसलों के लिए सामान्यतः बीजों की सीधी बुआई न करके नर्सरी में पहले उनकी पौध तैयार की जाती है। इसके बाद खेतों या बागों में इनका रोपण किया जाता है। नर्सरी में पौध तैयार करने के लिए कई तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए ट्रेनिंग लेना भी आवश्यक है। यही नही, शिक्षित बेरोजगार भी सब्जी बीज उत्पादन को एक व्यवसाय के रूप में अपनाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।

❋❋❋

उद्यमिता विकास में उपलब्धि अभिप्रेरणा की भूमिका

के.सी. मीना, सुनील कुमार, सुभाष असवाल, राकेश कुमार बैरवा एवं सी.एल. मीना
कृषि विज्ञान केन्द्र, अन्ता एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

ऐसे व्यक्ति जो अपना स्वयं का उद्यम प्रारम्भ करना चाहते हैं और उनमे इस पर काम करने की इच्छा तथा सामर्थ्य भी होता है। उनको अपने भावी उद्यमिता संबंधी बाधाओं जैसे संसाधनों की कमी, ज्ञान, अनुभव, कौशल की कमी आदि का भी ज्ञान होता है। उद्यमिता विकास में व्यक्ति, उपलब्धि की आवश्यकता तथा उपलब्धि अभिप्रेरणा की भूमिका किस प्रकार हो सकती है। इसका विवरण इस लेख में किया जा रहा है।

उद्यमीय अभिप्रेरणा

अभिप्रेरणा शब्द 'प्रेरणा' से निकला है। प्रेरणाएं मानवीय आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति को कहते हैं। सरल शब्दों में इसका अर्थ है कि जब कोई मनुष्य कोई भी कार्य करता है तो उसके पीछे कोई आवश्यकता अवश्य होती है जो उस कार्य को करने के लिये प्रेरित करती है। व्यक्तियों को काम करने के लिये प्रेरित करने के उद्देश्य से इन आवश्यकताओं का अनुभव कराने की प्रक्रिया अभिप्रेरणा कहलाती है। इस प्रकार अभिप्रेरणा वह क्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति को आवश्यकता का अनुभव करा कर काम करने के लिये प्रेरित किया जाता है। अभिप्रेरणा को मुख्य रूप से निम्न दो कारक प्रभावित करते हैं।

वित्तीय या मौद्रिक कारक : वित्तीय अभिप्रेरणा से अभिप्राय लाभ प्राप्त करने की इच्छा से है। अधिकाशंतः किसी भी व्यवसाय को प्रारभं करने का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना होता है फिर चाहे वह उद्योग छोटा हो या बड़ा। वित्तीय प्रेरणा इसलिए आवश्यक है क्योंकि व्यवसाय में होने वाले लाभ से उद्यमी अपनी सभी आवश्यकताओं को पूरा करता है एवं अपने व्यवसाय का विस्तार कर सकता है।

अवित्तीय कारक : अवित्तीय अभिप्रेरणा वह है जिसमें उद्यमी केवल लाभ नहीं कमाना चाहता बल्कि कुछ अलग एंव अच्छा करने की इच्छा रखता है। यही अभिप्रेरणा उसे उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद निर्माण हेतु प्रेरित करती है एंव उसे अपने प्रतिस्पर्धीयों से आगे ले जाने में तथा बाजार में अपनी साख स्थापित करने में सहायक होती है।

उपलब्धि की आवश्यकता उद्यमिता विकास को कैसे प्रेरित करती है?

उपलब्धि की आवश्यकता की भूमिका की जाँच का श्रेय हारवर्ड के प्रोफेसर मैकक्लीलैंड को जाता है उन्होंने जाचँ में पाया कि कुछ देश अन्य देशों सें आर्थिक रूप में अधिक विकसित है। और इन देशों के आर्थिक विकास के स्तर में अंतर के लिए उपलब्धि अभिप्रेरणा स्तर में अंतर उत्तरदायी है। इसके लिए उसने इन देशों की प्रसिद्ध कहानियाँ एवं जन श्रुतियाँ तथा प्राथमिक कक्षा तक पढ़ने वालों की जाँच की जिससे कि वह जान सके कि क्या वह व्यक्तिगत उपलब्धि, मानवीय साहस की जीत तथा परिस्थितियों से हटकर प्रत्यत्न आदि पर ध्यान देते थे। मैकक्लीलैंड के अनुसंधान ने इस धारणा की पुष्टि की कि आर्थिक विकास में अतंर का कारण उपलब्धि अभिप्रेरणा है। मैकक्लीलैंड ने माना कि उद्यमिता एक ऐसा माध्यम बन जाता है। जिसके द्वारा उपलब्धि अभिप्रेरणा सुस्पष्ट होती है तथा विकास गति पकड़ता है।

उद्यमिता के प्रवर्तन के लिए सही अभिप्ररेणा का प्रदीपण एंव जागृति महत्त्वपूर्ण है। अभिप्ररेणा के अभाव मे योग्य से योग्य व्यक्ति भी उद्यमिता को नहीं अपनाना चाहेगा। आप ध्यान रखें अभिप्ररेणा एवं योग्यता एक दूसरे को सकारात्मक रूप से पुष्ट करते हैं। जिन लोगों के पास योग्यता है वह अपनी इस योग्यता को दिखाने के लिए अवसर तलाशते हैं इसीलिए वें उद्यमिता की ओर आकर्षित होते हैं। जो व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से कार्य करना चाहता है वह अपने स्वप्नों को साकार करने के लिए अथक परिश्रम करता है किसी ने सच ही कहा है कि उद्यमी वह स्वप्नदृष्टा होते हैं जो इसे साकार करते हैं। उद्यमिता अभिप्रेरणा को समझने एवं विकसित करते समय यह शिक्षा प्राप्त करना महत्त्वपूर्ण है कि अलग–अलग व्यक्ति अलग–अलग ढगं से अभिप्रेरत होते हैं तथा कोई व्यक्ति अपने उद्यम से एक से अधिक आवश्यकताओं की संतुष्टि का प्रयत्न कर सकता है।

यह सत्य है कि कल्पनायें एवं विचार लक्ष्य प्राप्ति हेतु आपके व्यवहार को अभिप्रेरित करते हैं। आपकी अपनी सोच और कल्पनायें ही आपको दूसरों से भिन्नता प्रदान करती है तथा आपकी मानसिकता को उपलब्धि की चाह के लिये प्रेरणा प्रदान करती है। एक सफल उद्यमी ने अपनी सफलता के रहस्य को खालेते हुए लिखा है कि ''गरीब वह नहीं जिनके पास धन नहीं बल्कि गरीब वह हैं, जिनके पास कल्पना या स्वप्न नहीं होते।'' मस्तिष्क में उपजने वाली कल्पनाओ में चुम्बकीय शक्ति होती है जो व्यक्ति को अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर आकर्षित करती है। सामान्यतः सर्वेक्षणों के उपरातं यह पाया गया है कि एक उपलब्धि की चाह रखने वाले व्यक्ति में मुख्य रूप से चार प्रकार की कल्पनायें होती है जो इस प्रकार से हैं।

दूसरों के साथ प्रतियोगिता में सफल होने की इच्छा : एक उपलब्धि की चाह रखने वाला व्यक्ति सदैव स्वयं को सफल होते देखना चाहता है जिस हेतु वह सदैव प्रयासरत रहता है। इस प्रकार के मनोभाव सदैव व्यक्ति को इस बात के लिए प्रेरित करते हैं कि वह स्वयं को दूसरों से बेहतर साबित करे, अन्य की तुलना मे अच्छा कार्य करे एवं विजयी बने।

अपने द्वारा निर्धारित ऊंचे मापदंड की बराबरी करने की इच्छा : सिर्फ कल्पना करना एवं विचार करने मात्र से ही सफल नहीं बना जा सकता। इसके लिए स्वयं द्वारा निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करना भी आवश्यक होता है। इस तरह के व्यक्तियो की कल्पनाओ में अपने कार्यो को उच्च मापदण्ड के साथ पूर्ण करने की अभिलाषा होती है। यह स्वयं द्वारा निर्धारित लक्ष्य में स्वयं से ही प्रतियोगिता कर भविष्य की ऊंचाइयों को प्राप्त करते हैं।

कुछ अनोखी उपलब्धियो की इच्छा : एक सफल व्यक्ति सदैव अन्य से अलग कार्य करने की इच्छा रखता है वह कुछ ऐसा करना चाहता है जिससे उसकी अलग पहचान बने। इनकी खोज, सृजन या असामान्य कार्यो की कल्पना एवं कार्यो में उनकी सृजनशीलता उन्हे दूसरों से अलग पहचान बनाने में सहयोगी होते है।

दीर्घकालीन जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने मे लगे रहने की इच्छा : निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के पश्चात भी सफल व्यक्ति भविष्य के लक्ष्य निर्माण में लग जाता है वह अपने जीवन में प्रत्येक स्तर पर अपनी कल्पनाओ एव विचारो से प्रेरित होकर लक्ष्य की स्थापना करता है एवं उसकी पूर्ति हतु अग्रसर होते है। इन अभिप्रेरकों में से यदि एक भी इच्छा आप में विद्यमान है तो आप निश्चित रूप से एक सफल उद्यमी बन सकते हैं क्योंकि यही इच्छाएं एव कल्पनाएं आपको लक्ष्य निधार्रण में सहयोग प्रदान करेगी एव आपको सफल उद्यमी बनने हेतु प्रेरित करेगी। जिन स्त्री एवं पुरुषों को स्वयं की समार्थ्य का बोध है तथा जो अभी स्वयं स्वामी बनने में रुचि नही रखते हैं अथवा अभिप्रेरित नहीं है भावी उद्यमिता के लिए सक्षम स्रोत्र हैं। प्रतियोगी स्थिति में व्यक्तिगत उपलब्धि एव उच्च स्तरीय श्रेष्ठता उद्यमीय स्थिति की विशेषता है, इसीलिए उद्यमीय व्यवहार की मूल प्रेरणा के रूप में हमारे सामने निम्न उपलब्धि की आवश्यकताओं का नाम आता है।

कार्य सिद्धि की आवश्यकता: कार्य सिद्धि की आवश्यकता से अभिप्राय है कि किसी कठिन चीज को पूरा करने की इच्छा है। आप अपनी योग्यताओं एवं रुचि के अनुरूप कार्य करने का वातावरण पैदा कर सकते हैं।

अधिकार की आवश्यकता: इसका का कारण निर्धारित दिशा में चलने एवं इच्छित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए लोगों के व्यवहार को प्रभावित करने की कामना होती है। राजनेता, सामाजिक एवं धार्मिक नेता, मुख्य कायर्कारी अधिकारी सरकारी अफसर अधिकार की आवश्यकता के प्रतीक हैं। यह धारणा इस विश्वास पर आधारित लगती है कि शक्ति का स्त्रोत संगठन अथवा समाज में व्यक्ति का पद है। इसी शृंखला में व्यवसाय का स्वामित्व भी शक्ति की इच्छा है। लेकिन यह तो मानें कि व्यवसाय की स्थापना में व्यक्ति को पूँजीदाता, उपकरण एवं सामान के आपूर्तिकर्ता, कर्मचारी एवं ग्राहकों का विश्वास तो जीतना ही होगा। यदि आपके पास शक्ति है तो आप इसका प्रयोग केवल अपने हितों को साधने के लिए ही नहीं बल्कि इससे हटकर दूसरों के जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए भी कर सकते हैं। उद्यमी शक्ति प्राप्ति के इस सामाजिक पक्ष से प्रेरित होते हैं। यह उन संगठनों को ढूंढ़ते हैं जो अनेक लोगों की जीविका एवं आत्म सम्मान का स्त्रोत हैं।

दूसरों सें जुड़ना : आपने अपने अविभावकों को कहते सुना होगा कि वह जो कुछ भी करते हैं अपने बच्चों के लिए करते हैं। जब भी कोई व्यक्ति पारस्परिक सबंधो की सोचता है तो इसका अर्थ यह हुआ कि वह दूसरों से संबंध बनाने का इच्छुक है। इसका अर्थ है कि अन्य चीजों के साथ लोगों का सम्मान, इच्छाओं एवं मान्यताओं को स्वीकार करना है जिनका उनके लिए कोई महत्व है। ऐसा माना जाता है कि उद्यमी दूसरो से जोड़ने के सबंध में कम इच्छुक रहते है लोग स्वयं की संतुष्टि के लिए कार्य नहीं करते हैं बल्कि परिवार के लिए कार्य करते हैं। अपने परिवार एवं अपनी जाति के व्यवसाय के परम्परा को जारी रखने की इच्छा को सम्बद्धता की आवश्यकता के रूप में देखा जा सकता है।

स्वयत्तता की आवश्यकता: यह एक ऐसे अवसर की इच्छा है जिसमें व्यक्ति अपनी योग्यताओं का भली–भाँति प्रदर्शन कर सके । उद्यमिता के संदर्भ में इसे किसी अन्य के लिए काम न करने के निश्चय के रूप में देखा जाता है अधिकांश कार्य स्थितियों में कमर्चारियों को निणर्य लेने एंव कायर्वाही का मार्ग निश्चित करने में अपनी मर्जी की बहुत थोड़ी स्वतत्रंता दी जाती है जिसके कारण वह अपने स्वयं का व्यवसाय करने के लिए प्रेरित होते हैं।

समाज मे उधमशीलता विकास के लिए सामान्य रूप से अभिप्रेरण एक महत्वपूर्ण निर्धारक है। अतः अभिप्रेरण के विस्तृत परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत कुछ निम्न उधेश्यों को उधमशीलता व्यवाहर से मोटे तौर पर जुड़ा हुआ पाया गया है।

- उपलब्धि की आवश्यकता
- उच्च विस्तार
- शक्ति की आवश्यकता
- दूसरों से संबंध स्थापित करने की आवश्यकता
- निम्न निर्भरता

उपलब्धि अभिप्रेरक

उपलब्धि अभिप्रेरक व्यक्ति की अपेक्षाकृत रूप से वह स्थायी वृति है जो सफलता प्राप्ति के सम्बंध मे होती है जिस व्यक्ति मे यह प्रेरक होता है वह हमेशा ही एसे कार्य को करना पसंद करता है जिनसे उन्हे समाज मे गौरव एंव प्रतीष्ठा मिलें और लोग उसकी प्रशंसा करे।

उपलब्धि अभिप्रेरक व्यक्ति को निम्न कार्य करने हेतु अभिप्रेरित करता है।

1. किसी भी प्रतियोगिता मे उच्च स्थान हेतु प्रयास करना।
2. अपने आप चुने गये क्षेत्रों मे सफल होने के लिए प्रयास करना।
3. अपने जीवन मे अधिक से अधिक उन्नति करने का प्रयास करना।
4. अपने कार्यो मे असफल होने पर उस विफलता का उत्तरदायी खुद को मानना।
5. व्यवाहार के किसी भी क्षेत्र मे उच्च स्तर को प्राप्त करने का प्रयास करना।

उधम स्थापित करने का मतलब है कि उधमी का अभिप्रेरण का स्तर उच्च है। उधम के लिए अभिप्रेरणा की किस्म और कोटि का विशेष महत्व है। व्यक्ति की हर क्रिया किसी न किसी प्रेरक बिन्दु से नियंत्रित रहती है। उधम स्थापित करने के पीछे बहुत से प्रेरक बिन्दुओं की मिली–जुली छवि शामिल होती है और उधम को स्थापित करने में निश्चित रूप से बहुत से

प्रेरक बिन्दुओं का समावेश रहता है। जैसे कि :

(अ) वित्तीय प्रेरक बिन्दु – धन की प्राप्ति, बेहत्तर जीवनशेली के लिए।

(ब) सामाजिक प्रेरक बिन्दु – समाज में गौरव एंव प्रतीष्ठा मिलें और लोग उसकी प्रशंसा करें।

(स) सेवा उन्मुख प्रेरक बिन्दु – दूसरों को रोजगार देना, उनकी आवश्यकतानुसार सहायता करना।

(द) परिवार आधारित प्रेरक बिन्दु– बच्चों को स्थायी रोजगार एवं बेहत्तर जीवनशैली के लिए।

(य) आत्मसिद्धि संबंधी प्रेरक बिन्दु– मनमर्जी से काम करने की स्वतंत्रता, अपनी क्षमता को सिद्ध करना।

प्रसार कार्यकर्ता उधम गतिविधियों को शुरू करने के लिए संभावित उधमी की प्रेरक कारको की पहचान करने मे सहायता करते है। उधमियों के लिए अपने कार्यो से संबधित प्रेरक बिन्दुओं को न केवल सूचीबद्ध करना बल्कि इन्हे उनकी शक्ति के आधार पर वर्गीकृत करना भी अनिवार्य है। उधम की सफलता, तकनीक एंव प्रबंधन की बजाय, सही प्रेरक बिन्दुओं का चयन करने की है। विभिन्न लोगो मे विविध किस्म की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं का समावेश होता है और भावी उधमी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है उसका स्वाभाविक विशेषता। अतः उद्यमीय अभिप्रेरणा हेतु उपलब्धि की आवश्यकता का अर्थ है।

- एक ऐसा गुण / विशेषता जिसे प्रशिक्षण के माध्यम से विकसित किया जा सकता है।
- उधमशीलता संबधित गतिविधि को शुरू करने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक।
- उधमशीलता विकास का महत्वपूर्ण पहलू जिससे अंतत आर्थिक विकास होता है।
- उधम गतिविधि की सफलता मे शामिल एक महत्वपूर्ण कारक।

उधमशीलता अभिप्रेरणा विकास

प्रशिक्षण की प्रक्रिया के माध्यम से उधमशीलता अभिप्रेरण को विकसित करना एक जटिल प्रक्रिया है। हालांकि, यह निपुणता का क्षेत्र है उधमशीलता अभिप्रेरणा प्रशिक्षण, व्यक्ति–विशेष व्यक्तित्व और व्यक्तित्व के विकास मे अभिप्रेरण की जगह के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के अभिप्रेरणात्मक विश्लेषण पर आधारित है।

अब यह महसूस किया जा रहा है कि उपलब्धि अभिप्रेरण और उधमशीलता आधारित अभिप्रेरण का अर्थ एक जैसा नहीं है। यह संभव है कि इसमे निर्भरता विस्तार जेसे कुछ अन्य गुणो का भी समावेश होता है। उधमशीलता अभिप्रेरणा विकास प्रशिक्षण के निम्न उधेश्यों है।

- अभिप्रेरण पर जोर देते हुए सहभागियों के उधमशीलता संबंधी सामर्थ्य को बहेतर बनाना।
- सहभागियों को अपनी स्व जांच करने मे सहायता करना और उनकी इस छवि को परवेश से जोड़ना।
- दूसरों को प्रभावित करने की उनकी निजी शैली और मौजूदा स्थिति के प्रति उन्हे जागरूक करना।
- उन्हें सृजात्मक और नवीन सामर्थ्य को पहचान करने के योग्य बनाना।

संभावित उधमियों में इन महत्वपूर्ण उधमशीलता संबंधी गुणों की पहचान करने और इन्हें विकसित करने मे उधमशीलता अभिप्रेरणा प्रशिक्षण सहायक सिद्ध होते है। व्यक्तिगत जागरूकता उत्पन्न करके आत्मविश्वास जनित करके व्यक्तिगत लक्ष्यों को स्थापित करके और इनकी प्राप्ति के लिए कार्यनीतियाँ विकसित करके ऐसे गुणों की प्राप्ति की जा सकती है। इसके लिए आमतौर पर समूह सत्र (टावर बनाना), प्रशंनवालियों और स्व–मूल्यांकन के अभ्यास शामिल है। उधमी की पहचान और चयन संबन्धित तंत्र, निम्नलिखित महत्वपूर्ण पूर्वधारणाओं पर आधारित है।

- सभी व्यक्ति उधमी नहीं बन सकते क्योंकि सभी उधमियों में कुछ निश्चित गुण / विशेषता निहित होती है।
- कुछ मनोवैज्ञानिक एंव व्यवहारगत परीक्षणों और सामाजिक सूचकांको के माध्यम से एसी विशेषताओं की पहचान की जा सकती है और इन्हें मापा भी जा सकता है।
- ऐसे व्यक्ति जिनमें ये विशेषताएँ एक निश्चित न्यूनतम स्तर की है, उधमशीलता के अनिवार्य आयामो की प्राप्ति के लिए इन्हें विकसित किया जा सकता है।

❋❋❋

गर्भावस्था पशुओं एवं नवजात बछड़ों की वैज्ञानिक देखभाल

बी. एस. मीणा एवं मुकेश चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, करौली एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा (राजस्थान)

किसी भी डेरी फार्म की सफलता उसके बछड़ों–बछियों के उचित प्रबंधन पर निर्भर करती है. बछड़ों–बछियों के प्रारंभिक जीवन में बेहतर पोषण उनके तेजी से विकास और जल्दी परिपक्वता के लिए अच्छा होता है। बछड़ों–बछियों के अनुपयुक्त पोषण के कारण पहले ब्यांत में अधिक उम्र और पूरे जीवन काल की उत्पादकता में कमी हो जाती है. बछड़े भविष्य की डेयरी का निर्माण करते हैं। दूध उत्पादन व्यवसाय में बछड़ों की स्थापना करना सबसे मुश्किल काम है, जिसके लिए प्रबंधन कौशल, अनुप्रयोग और लगातार ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

गर्भावस्था के दौरान गाय भैंसों की देखभाल

गर्भधारण से गाय भैंसों के ब्याने तक के समय को गर्भकाल कहते हैं। भैंस में गर्भकाल 310–315 दिन व गाय मे 280 से 285 दिन तक का होता है। गर्भधारण की पहली पहचान गाय भैंसों में मदचक्र का बन्द होना है परन्तु कुछ भैंसों में शान्त मद होने के कारण गर्भधारण का पता ठीक प्रकार से नही लग पाता। अतः गर्भाधान के 21 वें दिन के आसपास भैंस को दोबारा मद में न आना गर्भधारण का संकेत माना है, विश्वसनीय प्रमाण नही। अतः किसान भाइयों को चाहिए कि गर्भाधान के दो महीने बाद डाक्टर द्वारा गर्भ जाँच अवश्य करवायें। गाभिन भैंस को अपने जीवन यापन व दूध देने के अतिरिक्त बच्चे के विकास के लिए भी पोषक तत्वों और ऊर्जा की आवश्यकता होती है। गर्भावस्था के अंतिम तीन महीनों में बच्चे की सबसे अधिक बढ़वार होती है इसलिए भैंस को आठवें, नवें और दसवें महीने में अधिक पोषक आहार की आवश्यकता पड़ती है। इसी समय भैंस अगले ब्यांत में अच्छा दूध देने के लिये अपना वजन बढ़ाती है तथा पिछले ब्यांत में हुई पोषक तत्वों की कमी को भी पूरा करती है। अतः गर्भावस्था के समय भैंस को संतुलित एवं सुपाच्य चारा खिलाना चाहिए।दाने में 40– 50 ग्राम खनिज लवण मिश्रण अवश्य मिलाना चाहिए। यदि इस समय खान–पान में कोई कमी रह जाती है तो निम्नलिखित परेशानियाँ हो सकती हैं।

- बच्चा कमजोर पैदा होता है तथा वह अंधा भी रह सकता है।
- भैंस फूल दिखा सकती है
- प्रसव उपरांत दुग्ध ज्वर हो सकता है
- जेर रूक सकती है
- बच्चे दानी में मवाद पड़ सकती है तथा ब्यांत का दूध उत्पादन भी काफी घट सकता है।

गाय भैंसों ब्याने के तुरंत बाद का प्रबंधन

पशु के थन और लेवटी को गुनगुने पानी में एंटीसेप्टिक् डालकर धोना चाहिए और एक साफ तौलिया से सुखाना चाहिए। लेवटी से दबाव दूर करने के लिए गाय का दूध दुहा जा सकता है। यदि जन्म पर बछडे को दूध छुड़ाने (वीनिंग) का अभ्यास नहीं किया जाता है तो गाय और बछड़े को 10 दिनों के लिए कैल्विंग पेन में रहने देना चाहिए। लेकिन, यदि जन्म पर दूध छुड़ाने का अभ्यास किया जाता है, तो बछड़े को तुरंत हटा लेना चाहिए। जिन गायों में मातृ–वृत्ति अधिक है और बछड़े का दूध छुड़ाने की समस्या है तो उन गायों की आंखों को ढक कर ही बछड़े को गाय से दूर हटाना चाहिए।

नवजात बछड़े की देखभाल

जन्म के तुरंत बाद हमें नवजात बछड़े के नाक से कफ (बलगम) को दूर करने में सहायता करनी चाहिए और बछड़े को एक साफ तौलिया के साथ पोंछते हुए सुखाना चाहिए। बछड़े का सही सांस लेना सुनिश्चित करना चाहिए। बछड़े की नाभि को शरीर से 2–3 सेंटीमीटर छोड़कर साफ कैंची से काट कर आयोडीन की टिंचर जैसी एंटीसेप्टिक् लगानी चाहिए ताकि नाभि के माध्यम से संक्रमण के प्रवेश को रोका जा सके।

कृमिनाश (डीवॉर्मिंग)

एस्कारियासिस गोलकृमि नवजात बछड़ों कटड़ों में आम है, इसके लिए बछड़ों को 10 ग्राम पिप्राजिन एडिपेट की एक खुराक दी जानी चाहिए।

कोलोस्ट्रम (खीस) खिलाना

माँ का पहला दूध कोलोस्ट्रम कहा जाता है। इसमें बड़ी मात्रा में गामा ग्लोब्युलिन होते हैं जो गाय द्वारा अपने जीवन के दौरान एंटीजन के खिलाफ निर्मित एंटीबॉडी हैं। इन एंटीबॉडिज का अवशोषण प्रारंभिक जीवन में बछड़े को कई बीमारियों के खिलाफ निष्क्रिय रोगक्षमता प्रदान करता है। इसके अलावा, कोलोस्ट्रम सामान्य दूध से सात गुना प्रोटीन और दोगुना ठोस पदार्थ वाला पोषक तत्वों का एक बहुत महत्वपूर्ण स्रोत

है। इस प्रकार यह प्रोटीन और ठोस सेवन को जल्दी बढ़ावा देता है। इसमें विटामिन और खनिजों की सामान्य से अधिक मात्रा है। जब एक बछड़ा पैदा होता है तो इसमें कोई एंटीबॉडी और विटामिन–ए नहीं होते, जो रोग से निपटने के लिए आवश्यक हैं। बछड़े का पहला गोबर (मेकोनियम) चिपचिपा और काले रंग का होता है और नवजात बछड़े को यह गोबर कोलोस्ट्रम खिलाने के 4 से 6 घंटों में निकाल देना चाहिए। कोलोस्ट्रम इसके लैक्सेटिव गुण के कारण मेकोनियम को बाहर निकालने में मदद करता है।

कोलोस्ट्रम खिलाने का समय

कोलोस्ट्रम की पहली खुराक जीवन के पहले 15–30 मिनट में और दूसरी खुराक लगभग 10–12 घंटों बाद बहुत उपयोगी हो सकती है।

कोलोस्ट्रम और दूध की संरचना

घटक	कोलोस्ट्रम (%)	दूध (%)
कुल ठोस	28.3	12.86
वसा	0.15-12 (2.9)	4.00
लैक्टोस	2.5	4.8
ऐष (राख)	1.58	0.72
कुल प्रोटीन	21.32	3.34
लोब्युलिन	15.06	0.00
केसीन	4.76	2.8
एल्बुमिन	1.5	0.54

कोलोस्ट्रम खिलाने की मात्रा

एक बछड़े को पहले 3 दिनों के दौरान कोलोस्ट्रम दिया जाना चाहिए। बछड़ों को खिलाए जाने वाले कोलोस्ट्रम की मात्रा उनके शरीर के वजन पर निर्भर करती है। भारतीय परिस्थितियों में 5 दिनों के लिए शरीर के वजन के 1/10 भाग कोलोस्ट्रम खिलाने की सिफारिश की गई है। दूध को पिलाने से पहले उबालकर शरीर के तापमान (39 डिग्री सेल्सियस) तक ठंडा किया जाना चाहिए। बर्तन में दूध पिलाने के लिए बछड़े का प्रशिक्षण :

- दूध छुड़ाए हुए बछड़ों को बर्तन में दूध पीने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि खाने का प्रबंधन आसान हो ।
- आम तौर पर क्रॉसब्रेड बछड़े बर्तन या निपल से दूध पीना जल्दी सीख जाते हैं। लेकिन भैंस के कटड़ों को प्रशिक्षित करना बहुत मुश्किल है।
- भैंस के कटड़े आलसी और धीमी गति से दूध पीना सीखते हैं।
- उबले हुए और ठंड़े दूध की निर्धारित मात्रा दूध के बर्तन या निपल में डालकर बछड़े के पास ले जानी चाहिए।
- पशु–परिचर को अपने दो उंगलियों (सूचकांक और मध्य उंगलियां) को सफाई के बाद दूध में डुबोकर बछड़े के मुंह के करीब रखना चाहिए।
- बछड़ा दूध को चखने के बाद उंगलियों को चूसना शुरू कर देगा।
- धीरे–धीरे उंगलियों को बर्तन तक लाकर दूध में डुबो देना चाहिए।
- जब बछड़ा दूध के एक या दो मुंह ले ले तो उंगलियों को हटा लेना चाहिए।
- इस प्रक्रिया को तब तक दोहराया जा सकता है जब भी बछड़ा दूध पीने से रुक जाए और अपना सिर ऊपर उठा ले।
- भैंस के कटड़ों के प्रशिक्षण के लिए धैर्य और प्रयासों की आवश्यकता होती है।

दूध प्रतिस्थापन (मिल्क रिप्लेसर)

इसमें मूल रूप से स्किम दूध पाउडर और चरबी या वनस्पति वसा होते हैं। ग्लूकोज, सोयाबीन आटा और अनाज के आटे का एक छोटा–सा हिस्सा

अच्छी गुणवत्ता वाले मिल्क रिप्लेसर में निम्नलिखित चीजें शामिल होनी चाहिए

सूखा स्किम्ड दूध पाउडर	50%
उच्च गुणवत्ता वाली वसा	10-15%
प्रोटीन	22- 25% तक
पूरक आहार	विटामिन ए, ई, बी 12
फीड एडीटीव (योजक)	एंटीबायोटिक
स्टार्च	थोड़ा या नहीं

भी कुछ खनिजों और विटामिनों के साथ जोड़ा जा सकता है। मिल्क रिप्लेसर जन्म के दूसरे सप्ताह से ही शुरू किया जा सकता है।

काफ स्टार्टर

ये सूखा अनाज मिश्रण बछड़ों को शुरू में खिलाया जाता है। बछड़े जीवन के दूसरे सप्ताह से सूख स्टार्टर की एक छोटी मात्रा खाना शुरू देते हैं। एक काफ स्टार्टर ऊर्जा (75% टीडीएन) और प्रोटीन (14–16 डीसीपी) में उच्च होना चाहिए। काफ स्टार्टर को मुफ्त–विकल्प के आधार पर खिलाया जा सकता है जब तक कि बछड़ा प्रतिदिन 1–1.5 किग्रा स्टार्टर मिश्रण का उपभोग शुरू न करे, जिसके बाद यह मात्रा प्रतिबंधित की जा सकती है। आम तौर पर बछड़ों को इस स्तर तक पहुँचने में 2 से 3 महीने लग जाते हैं। जब बछड़ा (नस्ल के अनुसार) प्रतिदिन 0.4–0.5 किलो सूखा अनाज मिश्रण खाना शुरू कर दे तो बछड़े को दूध पिलाना जल्द से जल्द बंद किया जा सकता है।

3 महीने से 6 महीने तक बछड़े का खानपान

एक बार जब बछड़ा 2–3 महीने की उम्र तक पहुँच जाता है तो बछड़े की मृत्यु दर की सबसे जोखिम भरी अवधि और सबसे महंगे खानपान का समय बीत चुका होता है। अब इस अवधि में मध्यम गुणवत्ता वाला चारा और सरल अनाज मिश्रण पशुओं को खिलाया जा सकता है। सामान्यतः एक बछड़े को एक किलो अनाज मिश्रण प्रतिदिन प्रति 100 किलो शरीर के वजन के अनुसार खिलाया जाना चाहिए।

वीनिंग (अलग करना/दूध छुड़ाना)

बछड़े को अपनी मॉ से अलग करके उसका विकास करना वीनिंग कहलाता है। इस व्यवस्था के तहत, गाय द्वारा उसके बछड़े को जन्म से ही दूध नहीं पिलाने दिया जाता। इसके बजाय, गाय का पूरा दूध निकालकर बछड़े को आवश्यक मात्रा में संपूर्ण दूध या मलाई निकाला हुआ दूध पिलाया जाता है।

लाभ

- बछड़ों को दूध एक निर्धारित मात्रा में पिलाया जा सकता है।
- किसी विशेष ब्यात में गाय द्वारा निर्मित दूध की सटीक मात्रा दर्ज की जा सकती है।
- स्वच्छ दूध का उत्पादन किया जा सकता है।
- गाय के ज्यादा दूध पिलाने से बछड़े में होने वाले दस्त को रोकता है।
- बछड़े की मृत्यु के बाद भी गायों का दूध देना जारी रहता है।

ब्रॉड बेड और फरो प्रणाली:- जल एवं मृदा संरक्षण तकनीक

प्रदीप कुमार, सी. के आर्य, मनोज कुमार शर्मा एवं राकेश कुमार बैरवा
कृषि अनुसंधान उप केन्द्र, अकलेरा, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़, कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

मानसून की शुरूआत के समय उतार चढाव, फसल की विभिन्न अवस्थाओं के दौरान अनियमित बारिश का वितरण व तीव्रता और इससे उत्पन्न सुखा व जल भराव से निपटने के लिए उचित प्रणाली की अनुपस्थिति, वर्षा आधारित खेती में फसल उत्पादन की प्रमुख बाधाएँ हैं। यद्यपि प्राप्त वर्षा और समय में परिवर्तन नही किया जा सकता परन्तु इनके उपयोग के उचित प्रबन्धन से फसल की पैदावार में सुधार एवं स्थायित्व लाया जा सकता है।

परिचय

ब्रॉड बेड और फरो प्रणाली (बीबीएफ) या चौडी क्यारी एवं कुण्ड विधि मुख्य रूप से अंतरराष्ट्रीय फसल अर्ध–शुष्क उष्णकटिबंधीय अनुसंधान संस्थान (ICRISAT), हैदराबाद द्वारा विकसित किया गया। वहां पर मेदक जिले के ताडथानापल्ली में आठ वर्षो तक व्यापक अनुसंधान किया गया। यह प्रणाली मिट्टी की सतह (बेड) निर्माण करके नियंत्रित सतह जल निकासी को प्रोत्साहित करने की बहुत पुरानी अवधारणा का आधुनिक संस्करण है।

इस प्रणाली में चौडे बेड 100 सेंटीमीटर तथा धंसी नाली 50 सेन्टीमीटर चौडी अनुसंशित है। तथा वर्टिसोल (काली मिट्टी) फरो के बीच की ढलान 0.4 व 0.8 प्रतिशत होनी चाहिए। फसल को दो, तीन या चार पक्तियों में बेड पर उगाया जा सकता है। बेड की चौंडाई तथा फसल की ज्यामिती को खेती/जुताई और रोपण के उपकरणो के अनुरूप बदला जा सकता है। इस प्रणाली का उपयोग मुख्य रूप से भारी काली मिट्टी/कपास मिट्टी (गहरी वर्टी सॉल) में किया जाता है।

उद्देश्य

1) मृदा प्रोफाइल में नमी भंडारण को संरक्षित करना/बढावा देना। गहरी वर्टीसॉल में मिट्टी की नमी का भंडारण 250 मि.मि. तक हो सकता है। जो कि सुखे की अवधि के मध्य या बाद के दौरान पौधों को पर्याप्त होता है। इससे इटरक्रोपिंग और अनुक्रमिक क्रोपिंग की संभावना भी बढती है। मृदा में संरक्षित यह जल बाद में वर्षा के बाद में शुष्क व ठंडी मौसम में पौधे के विकास में सहायक होता हे।
2) बिना कटाव पैदा किये वर्षा के अतिरिक्त/अधिशेष सतही जल/रन आफ की निकासी करना।
3) फसल को आसानी से उगाने वाली बेहतर मिट्टी (टिल्थ) प्रदान करना। मिट्टी की बुवाई के लिए आवश्यक नमी की स्थिति की बहुत ही सीमित सीमा होती है।
4) छोटे टेंको में संग्रहित सतही जल/रन ऑफ के पुनः उपयोग की संभावना को बढाना। इस प्रणाली में जीवनदायी सिंचाई की कम मात्रा सुखी अवधि में बहुत प्रभावी हो सकती है।
5) मृदा अपरदन/भू – क्षरण को रोकना/कम करना।

यह तकनीक गहरी वर्टीकल सोल/काली मिट्टी के लिए उपयुक्त है। भूमि की ढलान 3 प्रतिशत होनी चाहिए। 750 एम.एम. या उससे अधिक औसत वर्षा वाले क्षैत्र में सबसे अच्छा परिणाम देती है। कम औसत वर्षा क्षैत्रो एवं अल्फिसॉल या कम गहराई वाली काली मिट्टी में कम प्रभावी है। तदापि परम्परागत तरीके की अपेक्षा अधिक उत्पादकता मिलती है। ICRISAT ने भी जोर दिया है कि इस प्रणाली को अलग नही माना जाये व एक बेहतर कृषि प्रणाली पैकेज के हिस्सें के रूप में माना जाये।

बीबीएफ तकनीक से होने वाले लाभ

1. जल उपयोग क्षमता का बढना।
2. फसल उत्पादकता में वृद्वि (5– 10 प्रतिशत)
3. सुखे की अवधि में कम तनाव
4. सिंचाई में समय की बचत (25– 30 प्रतिशत)
5. कम बीज दर की आवश्यकता (20 – 25 प्रतिशत)
6. सिंचाई जल की बचत (25– 30 प्रतिशत)
7. खरपतवार प्रबंधन अधिक प्रभावी
8. फसल लॉजिंग (आडी पड़ना) कम होना
9. अतिरिक्त जल निकासी में आसानी

भविष्य में संभावना

जलवायु परिवर्तन एवं इससें फसल उत्पादन पर प्रभाव के सन्दर्भ में अर्द्व शुष्क क्षैत्रों में वर्षा आधारित खेती पर कुप्रभाव को कम करने एवं अधिक स्थायित्व प्रदान करने में यह तकनीक मुख्य भूमिका निभा सकती है। इस तकनीक का प्रदर्शन पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडू में किया जा रहा है। बीबीएफ सीडड्रिल के साथ यह प्रणाली सोयाबीन व मक्का उत्पादक क्षेत्रों में अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर सकती है।

❋❋❋

मेथी में होने वाले रोग और प्रबंधन

डी.एल. यादव, प्रीति वर्मा, सरिता एवं प्रतिक जैसानी
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

भारत में राजस्थान और गुजरात मेथी उत्पादन करने वाले खास राज्य हैं। 80 फीसदी से ज्यादा मेथी का उत्पादन राजस्थान में होता है। मेथी का उपयोग हरी सब्जी, भोजन, दवा, सौन्दर्य प्रसाधन आदि में किया जाता है। मेथी के बीज खासतौर पर सब्जी व अचार में मसाले के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं। तमाम बीमारियों के इलाज में भी मेथी का देशी दवाओं में इस्तेमाल किया जाता है। यदि किसान मेथी की खेती वैज्ञानिक तकनीक से करें, तो इसकी फसल से अच्छी उपज हासिल की जा सकती है। मेथी की अच्छी बढ़वार और उपज के लिए ठंडी जलवायु की जरूरत होती है। वातावरण में ज्यादा नमी होने या बादलों के घिरे रहने से सफेद चूर्णी, तुलासिता, पत्ती धब्बा जैसे रोगों का खतरा रहता है।

छाछ्या रोग

इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की पत्तियों पर सफेद चूर्ण पुंज दिखाई देते हैं जो उग्र रूप में पूरे पौधे को सफेद चूर्ण के आवरण से ढक देते हैं। रोग ग्रसित पौधे पीले व कमजोर हो जाते हैं। पत्तियाँ झड़ने लगती हैं, इससे बीज की उपज एवं गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसकी रोकथाम हेतु फसल पर रोग के लक्षण दिखाई देते ही घुलन ील गंधक 0.2 प्रति ात या केराथेन एल.सी का 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में 500 लीटर घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

तुलासिता

इसमें पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले धब्बे दिखाई देते हैं व नीचे की सतह पर फफूंद की वृद्धि दिखाई देती है। इसके अधिक प्रकोप से ग्रसित पत्तियाँ झड़ जाती है तथा उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

जड़गलन

इस रोग से जड़ की बढ़वार कम होती है एवं अन्त में जड़ सड़न के कारण नष्ट हो जाती है। ग्रसित पौधों की पत्तियाँ सूख जाती है एवं खींचने पर असानी से मृदास्तर से अलग हो जाते हैं। गर्मियो में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। उचित फसल चक्र को अपनाना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीजों को थाइरम या केप्टॉन (2–3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर) से उपचारित करना चाहिए। बीजों को ट्राइकोडर्मा मित्र फंफूद (8 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर) से उपचारित कर रोग में कमी की जा सकती है।

पत्ती धब्बा

इस रोग के प्रथम लक्षण पौधों की पत्तियों पर बड़े – बड़े धब्बों के रूप में प्रकट होते है। रोगी पौधों की पत्तियाँ झड़ने लगती है। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

❋❋❋

किसान का नया साथी - मेघदूत मोबाइल ऐप

सुनिल कुमार, के. सी. मीणा, राकेश कुमार बैरवा, सुभाष असवाल एवं गीतिका शर्मा
कृषि विज्ञान केन्द्र, अन्ता–बारां एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

विकासशील देशों में आर्थिक विकास, सामाजिक सशक्तिकरण एवं जमीनी स्तर पर नवाचार के लिए मोबाइल संचार प्रौद्योगिकी की भागीदारी बढ़ती जा रही है। एक अध्ययन के अनुसार हमारे देश में वर्तमान समय में 687.6 मिलियन इन्टरनेट, 400 मिलियन सोशियल मिडिया तथा 1.06 बिलियन मोबाईल फोन उपयोगकर्ता है। इनमें ग्रामीण भारत का हिस्सा लगभग आधा है। ग्रामीण क्षेत्रों और कृषक समुदाय के बीच मोबाइल फोन का प्रचलन हाल के वर्षों में बहुत तेजी से बढ़ता जा रहा है। मोबाइल फोन के साथ इंटरनेट का उपयोग भी इसी अनुपात में बढ़ता जा रहा है। अब मोबाईल का उपयोग महज मनोरंजन तक ही सीमित नहीं रह गया है, बल्कि हमारे किसान भाई भी अब स्मार्टफोन का इस्तेमाल खेती–बाड़ी से जुड़ी समस्याऐं सुलझानें में करने लग गए हैं। यह किसानों की खेती के प्रति जागरूकता कही जा सकती हैं।

पहले किसानों तक कृषि की महत्वपूर्ण सूचनाएं पहुंच ही नहीं पाती थी या देरी से पहुंचती थी। परन्तु मोबाइल फोन क्रांति से ही आज हमारे देश के किसानों तक कृषि से संबंधित सम्पूर्ण जानकारियां तुरन्त पहुंच रही हैं। भारत सरकार भी लगातार कोशिश कर रही है कि इस तकनीक के सहारे समय पर उन्नत खेती की जानकारी किसान तक पहुँचाई जाये।

इसी क्रम में मौसम और खेती से संबंधित जानकारियां किसानों तक पहुंचाने के लिए हमारे देश के भारतीय मौसम विभाग, उष्ण देशीय मौसम विज्ञान संस्थान, पुणे एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली ने मिल कर पूर्ण रूप से किसानों को समर्पित मोबाइल ऐप ''मेघदूत'' का शुभारम्भ किया, जो किसानों को मौसम आधारित कृषि सलाह उनके स्थान विशेष के अनुसार देता है। इस ऐप का शुभारम्भ 19 जुलाई, 2019 को पृथ्वी दिवस के दिन किया गया।

मोबाइल फोन में ऐप डाउनलोड कैसे करें ?

मेघदूत और दामिनी मोबाइल ऐप को किसान अपने स्मार्ट फोन में उपस्थित गूगल प्ले स्टोर और ऐप स्टोर पर जाकर बिना किसी शुल्क के मोबाइल फोन में डाउनलोड कर उपयोग कर सकते हैं।

पंजीकरण कैसे करें ?

इस ऐप को मोबाइल फोन में डाउनलोड करने के बाद सबसे पहले पंजीकरण करना आवश्यक है। इसमें अपना नाम, मोबाइल नम्बर, भाषा, लिंग, राज्य एवं जिला चुनकर पंजीकरण किया जा सकता है। पंजीकरण के बाद किसान अपना पंजीकृत मोबाइल नम्बर डालकर व अपनी पसंदीदा भाषा का चयन करके लॉग–इन कर सकते हैं। इसके बाद किसान अपने राज्य और जिले वार मौसम और फसलों के बारे में मौसम पूर्वानुमान आधारित आवश्यक जानकरियां प्राप्त कर सकते हैं।

मेघदूत ऐप पंजीकरण प्रकिया

ऐप कैसे काम करता है ?

इस ऐप के मुख्य पेज पर चार जानकारिया दिखाई देती है। पिछला मौसम, में किसान भाई पिछले दस दिनों के मौसम के आकड़े देख सकते है। पूर्वानुमान, में अगले पांच दिनों के मौसम का पूर्वानुमान देखा जा सकता है। जल्दी देखो, में उसी दिन के मौसम के आंकडे व ताजा कृशि पराम ि देखा जा सकता है, तथा स्थान प्रबन्धित करें, में नये स्थान को जोड़ा जा सकता है।

ऐप का उपयोग

1 किसान भाई पिछले दस दिन के मौसम (वर्षा, तापमान, हवा की गति, दिशा व नमी) का विवरण देख सकते है।
2 अगले पांच दिनों के मौसम पूर्वानुमान के आकड़े देख सकते है।
3 किसान अपनी स्थानीय भाषाओं जैसे–हिंदी, मराठी, बंगाली, गुजराती और उड़िया समेत 10 भाषाओं में मौसम का पूर्वानुमान के आधार पर प्रत्येक मंगलवार व शुक्रवार को कृषि सलाह देख सकते है।
4 मौसम पूर्वानुमान के आधार पर भविष्य की योजना बनाकर खेती करने में आसानी।
5 प्रतिकूल मौसम के बारे में अग्रिम जानकारी होने पर फसल को होनें वाले नुकसान से बचाया जा सकता है।
6 समय पर कीट एवं रोगों से फसल को बचाया जा सकता है। मौसम आधारित पशुपालन सम्बन्धी सलाहो का फायदा लिया जा सकता है।

मेघदूत ऐप उपयोगकर्ता जिला विशेष के मौसम पूर्वानुमान की जानकारी के साथ–साथ मौसम पूर्वानुमान के अनुसार कृषि कार्यो को सुनियोजित तरीके से करने की जानकारी प्राप्त कर सकता है। इस ऐप में जिले के अगले पांच दिन के मौसम का पूर्वानुमान प्रदर्शित होता है तथा पूर्वानुमान के आधार पर कृषि विशेषज्ञों द्वारा कृषि सलाह दी हुई होती है। इसी के साथ मौसम में होने वाले आकस्मिक बदलाव भी इस ऐप में दिखाऐं जाते है, जिससे समय रहते किसान फसल तथा पशुओं को होने वाले नुकसान से बचा सकता है।

विश्व मृदा दिवस - 5 दिसम्बर, 2020

मनोज कुमार शर्मा
कृषि अनुसंधान केन्द्र उम्मेदगंज, कोटा

आप और हम जिस धरती पर रहते है उसके धरातल में असंख्य जीव–जन्तु तथा वनस्पतियाँ अपना जीवन चक्र पूर्ण करती है। यह जीव–जन्तु तथा पादप हमारी मिटट्ी को जीवित रखते हुए इसकी जैव विविधता को बनाए रखने में अपना महत्वपुर्ण योगदान भी देते है। वैज्ञानिकों द्वारा बताया गया है कि एक छोटे चाय के चम्मच बराबर मिटट्ी में इतने असंख्य सूक्ष्म जीव पाये जाते है जितनी की धरती पर हमारी कुल मानव जनसंख्या है। यह सूक्ष्म जीव–जन्तु केवल जीवन निर्वाह ही नही करते है, अपितु हमारे मानव अस्तित्व के लिए पोषक तत्वों का अमुल्य खजाना छोडकर जाते है जो कि वनस्पतियो के पोषण से होता हुआ हमारे आहार और जीवन निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस वर्ष विश्व खाद्य संघठन द्वारा दिया गया स्लोगन कि मिट्टी को जिन्दा रखना हैं, और इसकी जैव विविधता को बरकरार रखना हैं, आज के समय में बहुत ही प्रासगिंक है। मिट्टी एक ऐसा प्राकृतिक संसाधन है, जो कि दिनो–दिन घटता जा रहा है। आज इसका विकल्प भी वैज्ञानिक समुदाय के लिए अनुसंधान का विषय बना हुआ है। मिट्टी को जीवित रखने से तात्पर्य उसमे इस प्रकार के पदार्थ मिलाए जाएं जो कि उसके अन्दर उपस्थित जीव–जन्तुओ के लिए उचित पोषण का कार्य करे। इस हेतु अगर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा बढ़ाई जाए, तो वह एक प्राकृतिक पोषक तत्वो का पोषण गृह साबित होता है, साथ ही मिट्टी में उपस्थित सभी जीव जन्तु तथा पादपों को पोषक तत्व उपलब्ध करवाने की क्षमता रखता है। वैज्ञानिक अनुसंधान के आकड़ों से यह परिणाम निकाला गया है कि, जिस गाँव, पंचायत, तहसील, जिला और राज्य की मृदाओं में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा सन्तुलित है वहां की फसलों की उत्पादकता तथा मृदाओं का स्वास्थ्य भी अच्छा है। मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने में जीवांश पदार्थो का विशेष महत्व है। जिन मृदाओं में जीवांश पदार्थ 0.5 प्रतिशत से अधिक हो उन्हे ही "जीवित मृदा" की श्रेणी में रखा जाता है, क्योंकि जीवांश पदार्थ कम होने पर मृदा में लाभकारी सूक्ष्म जीवाणुओं की उपलब्धता एंव सक्रियता घट जाती है। आज खेती के आधुनिक तकनीको के साथ ही कई नये–नये रासायनिक पदार्थो के उपयोग से मिट्टी की उर्वरता तथा उत्पादन क्षमता में दिन पर दिन गिरावट दर्ज की जा रही है, जो की बहुत विचारणीय पहलु है। मृदा में पाए जाने वाले लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल में विद्यमान नत्रजन को अवशोषित कर फसल को उपलब्ध करवाते है और साथ ही मृदा में अघुलनशील फास्फोरस को जल में घुलनशील अवस्था में परिवर्तित कर पौधो को प्राप्त करवाते है। वैज्ञानिक प्रयोगो द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि जैविक खादो के प्रयोगों से मृदा में 30–40 किलोग्राम नत्रजन प्रति हैक्टेयर की बढ़ोतरी होती है तथा उपज भी 10 से 20 प्रतिशत अधिक प्राप्त होती है।

हम अगर हाडौती क्षैत्र की बात करें तो यहाँ की मृदाओं में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा बहुत कम रह गई है। यहाँ की मिट्टियाँ काली जरूर है लेकिन मृदा जाँच में इनमें जैविक कार्बन की मात्रा औसतन 0.32 से 0.65 प्रतिशत तक ही दर्ज की गई है। यहाँ की मृदाओं का रंग काला होने का मुख्य कारण टाइटेनिफेरस मेग्नेटाइट नामक खनिज पदार्थ है। हाडौती की मृदाओ से सतत् उत्पादन लेना है तो यहाँ की मृदाओ को भी जीवित रखना होगा। इसके लिए कार्बनिक पदार्थो के जो भी स्त्रोत है जैसे–गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, जैव उर्वरक, हरी खाद और फसल अवशेष उपयोग को कृषि पद्धतियों में बढ़वा देकर मिट्टी को जीवित रखते हुए इसकी जैव विविधता को संधारित कर आने वाली पिढ़ियो के लिए सहेजना होगा। क्योंकि किसी महान दार्शनिक ने कहा भी है कि मिट्टी ही मानव जीवन के अस्तित्व का आधार है। आज चाँद और मंगल पर जीवन की परिकल्पना भी वहां की मृदाओ के सम्पूर्ण ज्ञान के बिना अधुरी हैं। अतः आज इस विश्व मृदा दिवस के अवसर पर हमें मानव समाज को यही सदेश देना है कि अगर मिटट्ी को जीवित रखेगें और उसकी जैव विविधता को बरकरार रखेगें तभी हमरा अस्तित्व धरती पर सम्भव है अन्यथा आने वाली पीढ़ियों को बहुत विकट परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा।